कल्याण भारती

वनवासी सेवा, संगठन और संस्कृति संरक्षण हेतु समर्पित

कल्याण भारती

वनवासी सेवा, संगठन और संस्कृति संरक्षण हेतु समर्पित

त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 27, अंक 4
अक्टूबर-दिसम्बर 2016 (विक्रम संवत् 2073)

सम्पादक
स्नेहलता बैद

–सम्पादन सहयोग–
तारा माहेश्वरी, रजनीश गुप्ता

पूर्वांचल कल्याण आश्रम

कोलकाता कार्यालय :
161/1, महात्मा गांधी रोड, बांगड़ बिल्डिंग
2 तल्ला, कमरा नं. 51, कोलकाता - 7
दूरभाष : 2268 0962, 2273 5792

प्रांतीय कार्यालय :
29, वार्ड इन्स्टीच्युशन स्ट्रीट
(मानिकतल्ला पोस्ट ऑफिस के पास)
कोलकाता - 6, दूरभाष : 2360 8334

हावड़ा कार्यालय :
13/14, डबसन लेन, 4 तल्ला,
गुलमोहर पार्क के पास
हावड़ा - 1, दूरभाष-2666–2425

–प्रकाशक–
विश्वनाथ बिस्वास

Registered with registrar of Newspaper for India Under LIC No. WBHN/2000/3887

Published by Bishwanath Biswas, on behalf of Purvanchal Kalyan Ashram, 161/1, Mahatma Gandhi Road, Bangur Building, 2nd Floor, Room No. 51, Kolkata-700 007 and printed at Shreyansh Prakashans, 30 Madan Mohan Talla Street, Kolkata-700 005. Editor : Snehlata Baid

अनुक्रमणिका

- संदेश 2
- शुभाशंसा 3
- संपादकीय 4
- वनवासी शिक्षा – अतीत से वर्तमान तक..... 5
- आगामी कार्यक्रम 6
- अ.भा.व.क.आश्रम : वनवासी क्षेत्र में शिक्षा 7
- शिक्षा सरिता चली गाँव की ओर.... 8
- अ.भा.व.क.आश्रम जनजाति नीति ... 11
- मणिपुर में छात्रावास की बहनों ने सेना ... 14
- एकल विद्यालय : उद्देश्य एवं परिकल्पना 15
- कल्याण आश्रम का शिक्षा प्रकल्प 16
- कल्याण आश्रम : शिक्षा हेतु प्रयास 18
- छात्रावास के संस्कारों ने नागालैण्ड 19
- कल्याण आश्रम के छात्रावास 20
- ग्रामीण एवं वनवासी शिक्षा 22
- अनौपचारिक शिक्षा द्वारा शिक्षा प्रसार.... 25
- संस्कार-सत्कर्मों का प्रवाह 27
- वनसम्पदा के ज्ञान से युक्त हो जनसम्पदा... 29
- युवा समिति द्वारा वनवासी बच्चों... 31
- शिक्षा के द्वारा जनजाति समूहों को देश.... 32
- कविता ... ज्ञान-दीप 34
- बोधकथा : पात्रता विकसित करें 34
- अनुकरणीय 35
- NEED OF QUALITY EDUCATION... 36

केशरी नाथ त्रिपाठी
राज्यपाल, पश्चिम बंगाल

राजभवन
कोलकाता ७०० ०६२

संदेश

०१.१२.२०१६

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि पूर्वान्चल कल्याण आश्रम 'वनबन्धु शिक्षा विशेषांक' का प्रकाशन करने जा रहा है।

मैं इस पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

शुभेच्छु
केशरी नाथ त्रिपाठी

केशरी नाथ त्रिपाठी

दूरभाष : (07763) 223253, 223620
फैक्स : (07763) 220885
पं. क्र. : 79, दिनांक : 09.10.1956

अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम
केन्द्र : जशपुर नगर - 496 331, जिला : जशपुर (छत्तीसगढ़)

संस्थापक अध्यक्ष : र. के. देशपाण्डे
अध्यक्ष : जगदेव राम उरांव

महामंत्री :
चन्द्रकांत देव

संगठन मंत्री :
सोमया जुलु

शुभाशंसा

सम्माननीया स्नेहलता बैद
सम्पादिका, कल्याण भारती
पूर्वांचल कल्याण आश्रम, कोलकाता

सादर नमस्कार !

आपके द्वारा प्रेषित दिनांक 24/10/2016 का पत्र मिला। अत्यंत हर्ष का विषय है कि पूर्वांचल कल्याण आश्रम कोलकाता, हावड़ा महानगर इकाई का 37वां वार्षिकोत्सव 18 दिसम्बर 2016 को स्थानीय कला मन्दिर प्रेक्षागृह में पश्चिम बंगाल के महामहिम राज्यपाल केशरीनाथ त्रिपाठी जी की अध्यक्षता में सम्पन्न होगा।

इस अवसर पर कल्याण भारती के 'वनवासी शिक्षा विशेषांक' का प्रकाशन हो रहा है। मानव जीवन में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्तमान व्यवस्था में शिक्षा के लिए विद्यालय की आवश्यकता है। जनजातीय क्षेत्र में कल्याण आश्रम द्वारा एकल विद्यालय से लेकर उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का संचालन हो रहा है। जनजातीय समाज में शिक्षा के प्रति अभिरुचि जागृत हो रही है। वनवासी शिक्षा विशेषांक के द्वारा जनजाति क्षेत्र में चल रहे शिक्षा आयामों के स्वरूप, स्थिति और उसके परिणाम का दिग्दर्शन करा सकेंगे, ऐसी आशा है।

आप कल्याण भारती 'वनवासी शिक्षा विशेषांक' के सम्पादन एवं प्रकाशन में यशस्वी होंगी। हमारी मंगल कामनाएं।

आपका

जगदेव राम उरांव

35, चंचल स्मृति, गं. द. आम्बेकर मार्ग, वडाला, मुम्बई, पिन - 400 031, दूरभाष : 24129615

संपादकीय...

मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति ही शिक्षा है

स्वामी विवेकानन्द की प्रसिद्ध उक्ति है ''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति ही शिक्षा है।'' उनका मानना था कि समस्त ज्ञान चाहे वह लौकिक हो अथवा आध्यात्मिक, मनुष्य के मन में है। बहुधा वह प्रकाशित न होकर ढका रहता है और जब आवरण धीरे-धीरे हटता जाता है तो कहा जाता है कि मनुष्य सीख रहा हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में जगद्गुरु स्वामी शंकराचार्य जी ने कहा है कि शिक्षा आत्मसाक्षात्कार है। आत्मसाक्षात्कार में व्यक्ति खुद को जानने और पहचानने का सतत् प्रयास करता रहता है। संस्कृत की शिक्ष् धातु से शिक्षा शब्द की व्युत्पत्ति हुई है जिसका अर्थ है सीखना। संसार के प्रत्येक बिन्दु से सिन्धु तक के ज्ञान को शिक्षा आत्मसात् करने को प्रेरित करती है। भारत की भूमि ज्ञान और साधना की संवर्धन स्थली रही है, यह शिक्षा की पवित्र धारा से रसाप्लावित और आह्लादित है। भारत में किसी भी समाज को शिक्षा से दूर रहने ही नहीं दिया गया। भारत शब्द की व्युत्पत्ति अत्यंत व्यापक और उदात्त है। ''ज्ञाने रतः यः सः भारतः'' अर्थात् जो निरन्तर ज्ञान की साधना में लगा रहे वही भारत है। यहां कोई भी शिक्षा के आंचल से दूर नहीं रहा। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम वनवासिनी शबरी माता को नवधा भक्ति की शिक्षा देते है। आज ये नवधा भक्ति श्रेष्ठ सन्तों की साधना बनी हुई है। इसकी तो प्रथम छात्रा माता शबरी और प्रथम अचार्य भगवान श्री राम ही थे। हम सब जानते है कि हमारी संस्कृति का आदि स्रोत वन और वनवासी ही रहा है। तपस्वियों, मुनियों, और ऋषियों की अविच्छिन्न श्रृंख़ला का वन और वनवासियों से नाता रहा है। वनवासी की कुटिया में बैठ कर ही वेद, पुराण, उपनिषद, महाभारत, एवं भागवत जैसे कालजयी ग्रन्थों की रचना हुई। यहीं पर आत्म ज्ञान की गहराई में डूब कर ''सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे संतु निरामया'' जैसे कल्याणकारी सिद्धांतों, मंत्रों की रचना हुई। कैसी विडम्बना है कि भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ जीवन मूल्यों की रक्षा करने वाला वनवासी समाज विदेशी आक्रमणकारियों के षड्यंत्रों एवं शेष समाज की उपेक्षा के कारण अलग-थलग पड़ गया। अनेक प्रकार के अभाव एवं शोषण से घिर गया। हाशिये पर जीवन जीने को अभिशप्त असंख्य वनवासियों कीअशिक्षा ही मूल समस्या है। वनवासी को शिक्षित बनाकर ही उसे आधुनिक तकनीक के साथ जोड़ते हुए देश की मुख्य आर्थिक धारा के साथ एकमेक किया जा सकता है। यह जाँच का विषय है कि जन-धन अभियान में वनवासी की भागीदारी कितनी है; वह देश की बैंकिंग-प्रणाली के साथ कितनी संख्या में जुड़ा है। सरकार के कदम से कदम मिलाकर संगठन कार्यकर्ता यह कार्य कर सकते हैं, वनवासी बन्धुओं की मुट्ठी में यदि मोबाइल फ़ोन आ जाता है, तो वह अपनी नैसर्गिक बुद्धि कौशल से ही सरकार के अनेक अभियानों को सफल कर सकता है। आवश्यकता है एक बड़ा सपना देखने की, और उसे पूरा करने में राष्ट्रनायक मोदीजी के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की। युग के आह्वान को सुना-समझा जाय, यही सभी सम्बन्धित बन्धुओं से विनम्र कामना है।

कल्याण भारती के शिक्षा विशेषांक हेतु रचनाएं उपलब्ध करवाने में संगठन के अधिकारियों विशेषकर अखिल भारतीय प्रचार प्रसार प्रमुख श्री प्रमोद पेठकर का भरपूर सहयोग रहा है। कोलकाता महानगर के सभी कार्यकर्ता बन्धु-भगिनि का सहयोग सदा की भांति मुझे प्रेरित करता रहा है। संपादन सहयोगी श्रीमती तारा माहेश्वरी एवं रजनीश गुप्ता ने संपादन एवं प्रूफ संशोधन हेतु निष्ठापूर्ण श्रम किया है। सभी के प्रति आंतरिक आभार। यह विशेषांक कल्याण आश्रम के सामाजिक समरसता एवं भावजागरण के आंदोलन को गति प्रदान करने में योगभूत बन सके इसी कामना के साथ.....❑

- स्नेहलता बैद

वनवासी शिक्षा – अतीत से वर्तमान तक.....

- सोमयाजुलु, संगठन मंत्री, अ.भा.वनवासी कल्याण आश्रम

प्रचार माध्यमों एवं पढ़े लिखे लोगों द्वारा अधिकांश समाज के सामने वनवासी समाज का चित्र जो प्रस्तुत किया जाता है, वह यह है कि वनवासी अनपढ़ है, उसे कुछ भी समझ नहीं है, वह गँवार है -तब मन में प्रश्न उठता है कि क्या सही में वनवासी समाज अनादिकाल से ही अनपढ़ रहा है ? इस समाज समूह को पढ़ाने की कोई व्यवस्था ही नहीं होगी ? आईये ! इस पर थोड़ा विचार करें।

वर्तमान में अपनी शिक्षा पद्धति अधिकतम शासन आधारित है। परन्तु एक समय था जब शिक्षा व्यवस्था गुरुकुल पद्धति से चलती थी। ये गुरुकुल वनों में होते थे। राजा-महाराजाओं के राजकुमारों के साथ सर्वसाधारण समाज के विद्यार्थी भी शिक्षा ग्रहण करते थे। उस समय वनवासी समाज की कोई अलग पहचान नहीं थी इसलिये हम ऐसा कह सकते हैं कि सभी के साथ वनवासी भी शिक्षा ग्रहण करते थे।

हम जानते हैं कि रावण से युद्ध के पूर्व लंका जाने के लिए राम की सेना ने सागर पर एक सेतु का निर्माण किया था। उस सेतु के निर्माण के समय नल और नील जैसे अभियंता थे। इस सेतु का बेजोड़ नमूना देखेंगे तो नल-नील जैसे अभियंताओं की बुद्धिमानी के प्रमाण मिलते हैं।

वैसे एक दूसरा भी प्रमाण अतीत में ही देखने को मिलता है। इतिहास कहता है कि वनवासी समाज में से कई राजा थे। उनके बड़े-बड़े राजमहल थे। उन प्रासादों के निर्माण में भी तो कोई न कोई अभियंता होंगे ही। समाज यदि अनपढ़ होता तो, ये कैसे सम्भव होता ? राजा थे तो न्याय व्यवस्था होगी, उसे भी संभालने वाले वनवासी बुद्धिमान होंगे ऐसा अलग से कहने की आवश्यकता नहीं।

तत्पश्चात् कुछ समय ऐसा आया कि भारत पर लगातार आक्रमण हुए। सम्पूर्ण समाज के साथ वनवासी समाज ने भी अतुलनीय पराक्रम दिखाया। ये सारे संघर्ष के कालखण्ड में समाज का शिक्षा की ओर थोड़ा दुर्लक्ष भी हुआ होगा। हम सब जानते हैं कि अंग्रेजों के भारत में आने से पूर्व समाज में शिक्षा की व्यवस्था पर्याप्त मात्रा में थी और वह समाज पद्धति पर आधारित थी जिसे अंग्रेजों ने शासन आधारित बना दी। इस परिवर्तन के कारण देश में अधिकतम विद्यालय नगरों में ही बने। परिणामस्वरूप वनवासी समाज में जितने प्रमाण में शिक्षा के लिए प्रयास होने चाहिए उतने नहीं हुए। इसमें दो-चार वर्ष नहीं परन्तु कई पीढ़ियों का समय व्यर्थ चला गया। आज उसके कारण ही वनवासी समाज में हम शिक्षा का प्रमाण कम देख रहे हैं। देश स्वतंत्र हुआ, उसके पश्चात् सरकार द्वारा और जागृत समाज घटकों ने वनवासी समाज के लिए शिक्षा के कुछ प्रयास अवश्य किये। जितने प्रयास हुए उससे अधिक प्रयास होने की आवश्यकता थी, इस बात को स्वीकार करते हुए हम कह सकते हैं कि वनवासी समाज के कई विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने में सफल हुए।

सरकार द्वारा जो शिक्षा प्रयास चल रहे हैं उसकी कुछ मर्यादाएँ भी हैं। सरकारी शिक्षकों की नियमितता पर प्रश्न चिह्न है। गुणवत्ता भी संतोषजनक नहीं है और आज भी विद्यालय सुदूर गाँवों तक उपलब्ध नहीं हैं। गैरसरकारी माध्यमों में जो सामाजिक प्रयास हैं उसमें नि:स्वार्थ भावना के कारण अच्छी गुणवत्ता देखने को मिलती है। अत: वे परिणाम संतोषकारक भी हैं।

जनजाति समाज के विकास हेतु कार्यरत वनवासी कल्याण आश्रम ने भी वनवासी शिक्षा हेतु विभिन्न प्रकार के प्रयास किये। कल्याण आश्रम का प्रारम्भ ही छात्रावास जैसे शिक्षा प्रकल्प से हुआ। हम औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार की शिक्षा के प्रयास कर रहे हैं। उसमें एकल विद्यालय जैसा एक अनोखा प्रयोग भी है। यह एक प्रेरक एवं सफल प्रयास है। सुदूर वनवासी गाँवों के बालक-बालिकाओं में शिक्षा के प्रति रूचि निर्माण हो रही है ऐसा हमारा अनुभव है। साथ-साथ संस्कार पक्ष पर भी ध्यान दिया जाता है।

शिक्षा प्रयासों में छात्रावास आयाम का भी अपना एक

महत्वपूर्ण स्थान है। कई वनवासी बालक-बालिकाओं ने छात्रावासों में माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् आगे महाविद्यालयीन शिक्षा भी प्राप्त की है। कल्याण आश्रम ने कार्य की आवश्यकता देखते हुए उत्तर-पूर्व के छात्रों के लिए देश में विभिन्न स्थानों पर छात्रावास प्रारम्भ किये गये, जिसमें बालिकाओं के लिये भी छात्रावास हैं। इनमें कई बालक-बालिकाओं ने शिक्षा ग्रहण की और आज उत्तर-पूर्व में हिन्दी भाषा सिखाने वाले आचार्यों की आवश्यकता है, इस हेतु छात्रावास से निकले बालकों का चयन हो रहा है।

अपने छात्रावास में अध्ययन कर कुछ वनवासी बालक डॉक्टर हुए, तो कुछ इंजीनियर, कुछ शिक्षक बने तो कुछ सरकारी अधिकारी। इसके अलावा पढ़ाई पूर्ण कर गाँवों में कुशल कृषक के रूप में कार्यरत हैं और ग्राम विकास के कार्य में सक्रिय ऐसे जनजाति युवकों के भी कई नाम हैं। हम ऐसा कई बार सुनते हैं कि राजनीति में समाज के अच्छे व्यक्तियों की सहभागिता होनी चाहिए, तो एक युवक ने अपने झारखण्ड के गुमला छात्रावास में पढ़ाई की और आगे महाविद्यालयीन शिक्षा के पश्चात् राजनीति में कार्य करने का विचार किया। वर्तमान में केन्द्रीय मंत्री के रूप में कार्यरत सुदर्शन भगत अर्थात् राजनीति में शिक्षित वनवासी युवक का जीवंत उदाहरण है।

वर्षों से जनजाति क्षेत्र में शिक्षा हेतु कार्यरत कल्याण आश्रम के कोई सुझाव हैं? - ऐसा यदि किसी ने पूछा तो हम यह अवश्य कह सकते हैं कि -

- सरकार ने सरकारी छात्रावासों में पढ़ाई, संस्कार और व्यवस्था को ठीक करना चाहिए।
- शिक्षा में हस्तकला और जनजाति नृत्य को जोड़ना चाहिए और जनजाति क्षेत्र के गौरवशाली इतिहास की जानकारी देनी चाहिए।
- जनजाति क्षेत्र में शिक्षा प्रसार में स्थानीय भाषा/बोली का ध्यान रखना चाहिए।
- लौकिक रूप में वनवासी समाज में पढ़े-लिखे लोग कम मिलते होंगे परन्तु उनके पास परम्परागत रूप में ज्ञान आज भी देखने को मिलता है। उसे उज़ागर करना चाहिए। जैसे कि वन क्षेत्र के गाँवों में कुछ व्यक्तियों के पास विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों के औषधीय गुणों का ज्ञान है, वे आज भी कुछ मात्रा में स्थानीय समाज का सफलतापूर्वक इलाज करते हैं। हमें उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए।
- वनवासी समाज के पास आध्यात्मिक एवं सात्विक ज्ञान का जो भण्डार है उसे अंधश्रद्धा कहते हुए उसकी ओर दुर्लक्ष्य करने का ही अभी तक अनुभव है उसको आदरपूर्वक पुरस्कृत करना चाहिए।
- उज्ज्वल भविष्य के लिये बालिका शिक्षा हेतु विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है।
- सरकारी प्रयासों को छोड़कर सम्पूर्ण समाज द्वारा वनवासी शिक्षा हेतु जितने प्रयास चल रहे हैं, उनकी गति बढ़ाने की आवश्यकता है। ❑

आगामी कार्यक्रम

मकर संक्रान्ति के पावन पर्व पर आगामी 14-15 जनवरी 2017 को जनजागरण अभियान के तहत पूर्वांचल कल्याण आश्रम कोलकाता-हावड़ा महानगर की सभी समितियाँ अपने-अपने क्षेत्रों में कैंप लगायेंगी। समग्र समाज इस पावन दिन पर वनबंधु का स्मरण कर दायित्व बोध का परिचय दें एवं मकर संक्रान्ति को सही अर्थों में **'सम्यक् क्रांति'** बनायें।

अमृत वचन

जब सैकड़ों-हजारों नर-नारी पवित्रता की अग्नि से पूर्ण, ईश्वर में अविचल विश्वास से युक्त और हृदय में सिंह का साहस लिए, गरीबों और पददलितों के प्रति सहानुभूति रखते हुए भारत के कोने-कोने में मुक्ति, सहयोग, सामाजिक उत्थान और समानता का सन्देश देते हुए विचरण करेंगे तब भारत विश्वगुरु बनेगा।

-स्वामी विवेकानन्द

अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम : वनवासी क्षेत्र में शिक्षा

- को.रामचन्द्रय्या, अ.भा.शिक्षा प्रमुख

वनवासी बन्धु सुदूर वनों में, पहाड़ों में रहने के कारण आज नागरिक कहलाने वाले नगरीय समाज से कई शतकों से अलग हो गये हैं। पूर्वकाल में शिक्षा पाने के लिए गुरुकुल, जंगलों में ही होते थे। अत: वनवासियों की पढ़ाई सुलभ रीति से होती थी। विदेशी आक्रमण और अंग्रेजों की शिक्षा प्रणाली के कारण वन-क्षेत्रों पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। वनवासी बुद्धिमान और ज्ञान सम्पन्न होकर भी आधुनिक शिक्षा से वंचित हो गये। स्वतंत्रता प्राप्ति के 70 वर्ष बाद भी वनवासी क्षेत्र में पढ़े-लिखे लोग बहुत कम हैं। वहाँ के कई वनवासी केवल अपना नाम लिखने में ही साक्षरता मान लेते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार देश की साधारण जनता में साक्षरता दर 73 प्रतिशत है जबकि वनवासी बंधुओं में 58 प्रतिशत है और वनवासी महिलाओं में 49 प्रतिशत है। इनमें भी दसवीं कक्षा के पहले ही पढ़ाई छोड़ने वाले बालक 50 प्रतिशत और बालिकायें 55 प्रतिशत हैं अत: इन सबको शिक्षित करके अन्य समाज के साथ विद्यावान बनाकर राष्ट्र प्रगति में सम्मिलित करने की आवश्यकता है। जनजातियों की पर्यावरण, संस्कृति, इतिहास एवं उनकी अपेक्षाओं के बारे में समयानुकूल शिक्षा पर सोचने की आवश्यकता है।

सरकार के सर्वशिक्षा अभियान के तहत बहुत सारे वनवासी गाँवों में भी सरकारी विद्यालय खुले हैं परन्तु सुदूर गाँवों में अध्यापकों की अनियमितता के कारण शिक्षा देने का स्तर बहुत कम है। बच्चों को संस्कार देने वाली शिक्षा के साथ-साथ उनको अनुशासित, समाज सेवाभावी और राष्ट्रभक्त बनाना अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए घर में, मन्दिर में, विद्यालयों में, उत्सवों में, तीर्थयात्राओं और मेलों में संस्कारित करना आवश्यक है। अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम इनकी पूर्ति के लिए अन्य प्रकल्पों, हिन्दी के साथ-साथ शिक्षा प्रकल्पों के माध्यम से औपचारिक विद्यालय, एकल विद्यालय एवं ग्रंथालय का संचालन कर रहा है। गांव के एकल विद्यालय लगभग तीन घंटे के होते हैं, इसके पश्चात् भारतीय खेल, राष्ट्रभक्ति गान, वनवासी नृत्य व संगीत, कहानियाँ इत्यादि सिखाई जाती हैं।

वनवासी कल्याण आश्रम के द्वारा देश भर में निम्न प्रकार के शिक्षा प्रकल्प वर्तमान में चल रहे हैं।

माध्यमिक, उच्च माध्यमिक पाठशाला	46
प्राथमिक शिक्षा पाठशाला	184
एकल विद्यालय	2932
रात्रि पाठशाला	126
बाल संस्कार केन्द्र	1288
ग्रंथालय	69
कुल शिक्षा प्रकल्प	**4645**

इनको अधिक संस्कारक्षम बनाने के लिए जिला संगठन मंत्री, तहसील प्रमुख और स्थानीय कार्यकर्ता विद्यालय के आचार्य की सहायता करते हैं। वनवासी कल्याण आश्रम के प्रति वनवासी बंधुओं में विश्वास की लौ जगी है। वनवासी क्षेत्रों में विभिन्न स्तर के विद्यालयों के माध्यम से शिक्षा, संस्कार, शारीरिक विकास, सामान्य ज्ञान, अपनी संस्कृति निष्ठा, राष्ट्र के प्रति चेतना, सामाजिक दायित्व का भाव विकसित हो रहा है। ये सब कार्य शासन से किसी भी स्तर के अनुदान के बिना ही पूर्ण समर्पण भाव से हो रहा है।

शिक्षा प्रकल्प की उपलब्धियाँ-

1. कल्याण आश्रम के कार्यकर्ताओं के अथक परिश्रम के कारण राजस्थान के बांसवाड़ा जिले के भाटमोडी नामक वनवासी गाँव पूर्णरुपेण साक्षर एवं नशामुक्त हो

गया है। उड़ीसा के कालाहांडी जिले के 4 गांव भी नशामुक्त हो गए हैं।

2. छत्तीसगढ़ के रायपुर में स्थित शबरी कन्या आश्रम में पूर्वांचल से बालिकाओं को लाकर पढ़ाई के साथ-साथ संस्कारित एक युवती ने एम.ए. की पढ़ाई पूर्ण की। उसे नागालैण्ड में अध्यापिका की नौकरी मिल गई। सब लोग अपनी नियुक्ति शहरों में या अपने गांव के नजदीक चाहते हैं लेकिन इस युवती ने सुदूर वनवासी गांव में नियुक्त होना पसंद किया। सरकारी अधिकारी आश्चर्यचकित हो पूछने लगे तुम ऐसा क्यों चाहती हो? उसने कहा ''मैं कल्याण आश्रम के छात्रावास में रहकर पढ़ी हूँ अत: वहाँ के संस्कारों के कारण सुदूर गांवों में जाकर सेवा करने की इच्छा है।'' आज वहीं जाकर अध्यापिका के नाते काम कर रही है।

3. नागालैण्ड के मोहन जिले के हमारे विद्यालय के 15 अगस्त के कार्यक्रम में मुख्यमंत्री और असम राइफल के कमांडर मुख्य अतिथि के रूप में आए थे। विद्यालय के सारे बच्चों ने ''देश हमें देता है सब कुछ, हम भी तो कुछ देना सीखें।'' सामूहिक गीत गाया। सुदूर नागालैण्ड के गाँव में हिन्दी के इस राष्ट्रभक्ति गान को सुनकर दोनों अतिथियों ने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की एवं बच्चों को पुरस्कृत किया।

सरकार से हमारा अनुरोध है कि आने वाले दिनों में वनवासी गांव में प्राथमिक शिक्षा उनकी मातृभाषा में होनी चाहिए। वनवासी महापुरूषों, स्वतंत्रता सेनानियों की जीवनी पाठ्य पुस्तकों में पढ़ाई जानी चाहिए। सरकारी विद्यालयों के माध्यम से साक्षरता दर शत् प्रतिशत् होना चाहिए और छात्र बीच में पढ़ाई न छोड़ें, ऐसी प्रेरणा देनी चाहिए। पाठ्यक्रम में स्थानीय वनवासी विज्ञान, कौशल, परम्परा और लोक कलाओं का समावेश होना चाहिए। ❑

शिक्षा सरिता चली गाँव की ओर....

- प्रमोद पेठकर, अखिल भारतीय प्रचार-प्रसार प्रमुख

अशिक्षा देश की महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है। 1947 में देश स्वतंत्र हुआ। समस्या तब भी थी आज भी है। हमें इस बात को स्वीकार करना होगा कि हम सम्पूर्ण समाज को लौकिक रूप में क्यों न हो परन्तु शिक्षा दे नहीं सके। जनजाति क्षेत्र के सन्दर्भ में देखें तो अशिक्षा का प्रमाण अधिक है। अर्थात सधन प्रयासों की आवश्यकता भी है।

वर्तमान में जनजाति क्षेत्र में शिक्षा की स्थिति क्या है? सुदूर वनाँचल के कई गाँव ऐसे होंगे जहाँ विद्यालय नहीं है। जहाँ विद्यालय हैं, वहाँ आचार्य आते नहीं और जहाँ आचार्य आते हैं उनकी पढ़ाने की गुणवत्ता पर ही प्रश्न चिन्ह है ।

ऐसे में वनवासी बन्धुओं की शिक्षा हेतु कार्य करना अत्यंत आवश्यक है। सरकार का शिक्षा विभाग, सामाजिक संस्थाएँ, इस हेतु कार्यरत हैं। परन्तु अधिकतम प्रयास अंग्रेजों की छाया में ही दिख रहे हैं। अंग्रेजों ने भारत में जो शिक्षा व्यवस्था प्रारम्भ की आज भी हम इस सन्दर्भ में पूर्णत: मुक्त हो गए, ऐसा नहीं कह सकते। देश में कई विद्वान ऐसे मिलेंगे जिनकी सोच आज भी बदली नहीं है मानो, वे अंग्रेजों के अनुगामी हैं। भारतीय विचार कहता है कि शिक्षा सेवा है, परन्तु समाज में विरोधाभासी चित्र दिखता है। नगरों-महानगरों में कहीं-कहीं तो शिक्षा संस्था का संचालन एक व्यवसाय बन गया है।

अनुभवों के आधार पर कुछ मात्रा में परिवर्तन अवश्य हुए हैं और हो भी रहे हैं। जिनके मन में थोड़ी बहुत सकारात्मक सोच है वे कार्यरत दिखाई देते हैं। हम तो इतना ही कहेंगे की शिक्षा व्यवस्था दूर-दूर तक

उपलब्ध हो और साथ में शिक्षा का आधार भारतीय हो, यह समय की आवश्यकता है।

वनवासी कल्याण आश्रम भी जनजाति क्षेत्र में कार्यरत है। अपने वनवासी बन्धुओं का सर्वांगीण विकास हमारा लक्ष्य है। हम वन क्षेत्र के अंदरूनी गाँवों तक विभिन्न प्रकार के 4645 शिक्षा प्रकल्प चला रहे हैं।

शिक्षा के प्रयास प्रमुख दो प्रकार के है, एक औपचारिक और दूसरा अनौपचारिक। प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का संचालन यह औपचारिक शिक्षा प्रकल्प है और बालवाड़ी, बाल संस्कार केन्द्र, एकल विद्यालय, ग्राम शिक्षा-केन्द्र, रात्रि पाठशाला, अभ्यासिका, पुस्तकालय-वाचनालय जैसे कुछ प्रकल्प अनौपचारिक शिक्षा प्रकल्प के रूप में चल रहे हैं।

विद्यालयों में सरकारी अभ्यास क्रम पढ़ाया जाता है और साथ-साथ वनवासी बालक-बालिकाओं में देशभक्ति के संस्कार विकसित हो, इस हेतु विभिन्न प्रकार के प्रयास होते हैं। अनौपचारिक शिक्षा प्रकल्पों में अक्षरज्ञान, गीत-भजन, कथा, और खेलों के माध्यम से बालकों में शिक्षा के प्रति अभिरूचि जगाने के प्रयास होते हैं। अपने विभिन्न शिक्षा केन्द्रों में अक्षर ज्ञान के साथ-साथ संस्कार सिंचन भी होता है। परिणामस्वरूप बालक घर जाकर अपने माता-पिता के चरण वंदन करता है, प्रात: उठकर स्नान कर भगवान को प्रणाम करता है, भोजन के समय भोजन मंत्र बोलता है। ये संस्कार जो जीवन परिवर्तन का माध्यम बने, आगे चलकर उसे समाजोन्मुख बनाते हैं।

बालक चाहे नगर में रहने वाला हो या वन में, सभी में अपार शक्ति होती है। हमें तो केवल उसे जानना और सुप्त शक्ति का जागरण करना, इतना ही कार्य करना है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा है,"यदि शिक्षा का अर्थ जानकारी होता, तो पुस्तकालय संसार के सबसे बड़े संत हो जाते और विश्वकोष महान ऋषि बन जाते। सत्यता यह है कि बालक अनंत अन्तर्निहित शक्तियों का भण्डार है। उनको प्रकाश में लाना और बालक को क्रियाशील बनाना ही शिक्षा है।'' हमारे पुरखों ने कहा है, 'य: क्रियावान स: पण्डित:' (जो क्रियाशील है वह बुद्धिमान है।)

अपने सभी शिक्षा केन्द्र मानों स्वामी जी के विचारों के अनुरूप चलते हैं। यहां बालकों के गुण विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। अपनी सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप शिक्षा होनी चाहिए इस बात को महत्वपूर्ण माना है।

अपने अधिकतम शिक्षा प्रकल्प सुदूर वनांचल में चलते हैं, जहाँ आवागमन से लेकर कई प्रकार की प्रतिकूलताओं के बीच कार्य चलता है। उड़ीसा जैसे प्रान्तों में रात्रि पाठशालाएँ चलाई जाती हैं। वनवासी कल्याण आश्रम के अनौपचारिक शिक्षा प्रकल्पों में 'एकल विद्यालय' यह सफल प्रयास है।

किसी घर का आंगन, मंदिर का परिसर अथवा किसी एक विशाल पेड़ की छाया में चलता है अपना एकल विद्यालय। उस गाँव की समिति उसका संचालन करती है। ऐसे 10-12 केन्द्रों का एक संघ प्रमुख होता है, जो उसके सातत्य से लेकर गुणवत्ता तक ध्यान देता है। एकल विद्यालय चलाने वालों से लेकर संघ प्रमुखों तक सभी के प्रशिक्षण की एक श्रृंखला बनाई गई है। यह कार्य कई वर्षों से चल रहा है। आज हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि अपना एकल विद्यालय न केवल उस गाँव का स्फूर्ति केन्द्र है अपितु सामाजिक कार्य में कार्यरत किसी की भी प्रेरणा बन सकता है। नि:स्वार्थभाव के साथ अपने गाँव के बालकों को पढ़ाना, बस ! इतना विचार ही उसकी क्रियाशीलता का आधार है।

वनवासी कल्याण आश्रम का कार्य अधिकतम समाज आधारित है। नगर के कई परिवार हमें आर्थिक सहयोग देते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो शिक्षा क्षेत्र में चल रहे अपने प्रयास शासन द्वारा चल रहे प्रयासों से हट कर है। राजस्थान के भाटमहुडी (जिला पाली) गांव के एकल विद्यालय का संचालन करनेवाले कार्यकर्ता की

समर्पण भावना को देखते हुए वहां के शिक्षा विभाग ने उसको सम्मानित किया था।

सामान्य मानदेय लेनेवाले ग्रामीण युवक-युवतियाँ न केवल आचार्य हैं, अपितु इस पवित्र कार्य को वहन करने वाले कार्यकर्ता भी है। 'तू मैं एक रक्त' इस बोध वाक्य का सही अर्थ में एक प्रेरक उदाहरण है। अपना एकल विद्यालय वनवासी एवं नगरवासी दोनों को जोड़ता है। सामाजिक अभिसरण का वाहक है।

विद्यालयों में वनवासी बालक एक साथ तीन भाषाओं में पढ़ाई करता है। यह जानकार कुछ लोगों को आश्चर्य होगा परन्तु यह सच है। एक तो माता-पिता और उसके जनजाति के बालक जो बोलते हैं वह बोली, दूसरा उसके विद्यालय के अन्य बालक (कई बार एक ही विद्यालय में दो-तीन जनजाति के बालक पढ़ते हैं।) और कभी कभी आचार्य जो पढ़ा रहे हैं उनकी बोली और तीसरा विद्यालय के शिक्षा के माध्यम की भाषा। इस परिस्थिति में बालक की ग्रहणशक्ति का अभिनन्दन करना चाहिए। ऐसे में उस बाल मानस पर अंग्रेजी माध्यम का एक नया बोझ प्राथमिक शिक्षा के समय में रखेंगे तो क्या होगा उस बालक का ? फिर भी समाज के कुछ लोगों का आग्रह रहता है कि बालक को अंग्रेजी माध्यम में पढ़ाना चाहिए और वह भी प्राथमिक कक्षा से। कल्याण आश्रम का आग्रह है कि मातृभाषा में ही पढ़ाई हो।

शिक्षा की पद्धति, बच्चों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार, केन्द्र का वातावरण, आचार्यों की सिद्धता, ग्रामीण जीवन के साथ जुड़ाव, यह सब देखते हुए हम यह अवश्य कह सकते हैं कि शिक्षा क्षेत्र में चल रहे हमारे प्रयासों की दिशा सही है।

जनजाति क्षेत्र की आवश्यकता को देखते हुए छात्रावासों का संचालन भी शिक्षा क्षेत्र का ही महत्वपूर्ण कार्य है। वैसे कल्याण आश्रम की स्थापना ही छात्रावास जैसे शिक्षा प्रकल्प के माध्यम से ही हुई है और हमें कहने में अत्यन्त हर्ष होता है की वर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्ष जगदेव राम उरांव भी जशपुर छात्रावास के पूर्व छात्र रहे हैं।

आज हम 224 छात्रावासों का संचालन करते हैं। विशेष तौर पर उत्तर-पूर्व क्षेत्र के बालक-बालिकाओं के लिए देश के विभिन्न नगर-महानगरों में छात्रावासों की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। ये एक अनोखा प्रयास है जो शिक्षा के साथ-साथ समाज में एकात्मता की भावना का संवर्धन करता है।

शिक्षा क्षेत्र में 'बालिका शिक्षा' पर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। बालिका पढ़ेगी तो अगली पीढ़ी पढ़ेगी। देश का भविष्य उज्जवल होगा। अत: बालिका शिक्षा के क्षेत्र में भी हम कार्य कर रहे हैं। छात्रावासों में कुछ छात्रावास बालिकाओं के लिए चल रहे हैं। छोटे-छोटे गाँवों में अपने कार्यकर्ता वनवासी परिवारों में बालिका शिक्षा हेतु सतत प्रयत्नशील हैं।

नगर के महाविद्यालय से शिक्षा प्राप्त युवक सामान्यत: क्या सोचता है? नौकरी करूंगा, घर-गृहस्थी सम्हालना है, पैसे कमाना है, मकान बनाऊँगा, चैन से रहूँगा। इससे अधिक कुछ नहीं। वास्तव में इसमें उसका दोष नहीं परन्तु अपनी शिक्षा प्रणाली का दोष है। अध्ययन के दौरान उसने क्या सीखा? केवल भौतिक जीवनपद्धति से अधिक कुछ नहीं। इसीलिये दूर दूर वन-पर्वत में जाना, दूसरों के लिये कष्ट सहन करना यह उसे आवश्यक नहीं लगता। परन्तु भारतीय विचार कहता है की 'वैष्णव जन तो तेने कहिये जे पीड़ पराई जाणे रे' दूसरों के लिये कष्ट सहन करने में ही जीवन की सार्थकता है।

अभी हम जिस विषय के सन्दर्भ में विचार कर रहे हैं, उसके अनुरूप कहना है कि अपने वनवासी बन्धुओं के लिये और विशेषत: वनवासी शिक्षा हेतु प्रयास करना ही हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। यह हमारा सामाजिक दायित्व है। कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता इसी दायित्व के अनुरूप वन-पर्वत के गाँव-गाँव में शिक्षा प्रकल्प चला रहे हैं, मानो शिक्षा सरिता को गाँव-गाँव तक ले जाने के लिए प्रयत्नरत हैं। ❑

अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम जनजाति नीति दृष्टिपत्र में प्रस्तावित शिक्षा नीति

- अतुल जोग, अ.भा.सह-संगठनमंत्री

सामाजिक विकास के अन्य अधिकांश मापकों की तरह भारत की जनजातियां शिक्षा में भी सामान्य जनसंख्या से बहुत पीछे है। 2011 की जनगणना के अनुसार (सारणी नीचे देखें)। जनजातियों की साक्षरता दर 59 प्रतिशत है जो कि कुल जनसंख्या से 14 प्रतिशत एवं अनुसूचित जातियों की जनसंख्या से भी 7 प्रतिशत कम है।

सभी सामाजिक समूह									
सभी सामाजिक समूह				अनुसूचित जाति			अनुसूचित जनजाति		
वर्ष	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला	कुल
1961	40.40	15.35	28.30	16.96	3.29	10.27	13.83	3.16	8.53
1971	45.96	21.97	34.45	22.36	6.44	14.67	17.63	4.85	11.30
1981	56.38	29.76	43.57	31.12	10.93	21.38	24.52	8.04	16.35
1991	64.13	39.29	52.21	49.91	23.76	37.41	40.65	18.19	29.60
2001	75.26	53.67	64.84	66.64	41.90	54.69	59.17	34.76	47.10
2011	80.89	64.64	72.99	75.17	56.46	66.07	68.53	49.35	58.96

फिर भी आंकड़ों में आशा की एक किरण दिखाई देती है। 2001 एवं 2011 के बीच जनजातियों की साक्षरता दर में 12 प्रतिशत का सुधार हुआ जो कुल जनसंख्या में हुए 8 प्रतिशत के सुधार से भी अधिक है। जनजातियों की महिला साक्षरता में सुधार तो और भी अधिक प्रभावी है; 2001 की तुलना में उनमें 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई, इसी अवधि में महिलाओं की कुल जनसंख्या की साक्षरता में 11 प्रतिशत की अच्छी वृद्धि हुई थी।

साक्षरता दर में सुधार नामांकन के आंकड़ों में भी झलकता है। मानव विकास संसाधन मंत्रालय के योजना, निगरानी एवं सांख्यिकी ब्यूरो के अनुसार 2010-11 में प्राथमिक स्तर पर जनजातियों का सकल नामांकन अनुपात बालक एवं बालिका दोनों में 137 प्रतिशत था। अनुसूचित जातियों के बालकों में 131 एवं बालिकाओं में 133 प्रतिशत था एवं कुल जनसंख्या के लिये यह आंकड़ा क्रमश: 115 एवं 117 प्रतिशत था। माध्यमिक या उच्च प्राथमिक स्तर पर नामांकन थोड़ा था परन्तु फिर भी जनजाति लड़कों के लिये 91 एवं लड़कियों के लिये 87 प्रतिशत जितना ऊंचा था। सम्बन्धित आंकड़ा अनुसूचित जातियों के लिये क्रमश: 94 एवं 91 तथा सम्पूर्ण जनसंख्या के लिये 88 एवं 83 प्रतिशत था।

ड्राप आउट दरें: जनजाति एवं कुल जनसंख्या हेतु जनगणना 2011

	सभी	जनजाति	सभी	जनजाति
कक्षा 1- 4	28.7	37.2	25.1	33.9
कक्षा 1 - 8	40.3	54.7	41	55.4
कक्षा 1-9	50.4	70.6	47.9	71.3

शिक्षा, विशेषकर जनजाति क्षेत्रों में कार्य करते-करते सीखने का शक्तिशाली घटक होना चाहिए। *पाठ्यक्रम एवं शिक्षा-शास्त्र ऐसा हो जिसमें स्थानीय ज्ञान, पद्धतियों एवं तकनीकी को समाहित कर इन्हें शिक्षण का नियमित भाग बनाया जाए।*

उच्च प्राथमिक शिक्षा

1. इस स्तर पर पाठ्य पुस्तकों में क्रमबद्ध अनुपात में स्थानीय एवं राष्ट्रीय विषयों का समावेश हो ताकि बच्चे मौलिक तथ्यों एवं वैश्विक रूप से स्वीकृत सिद्धान्तों को स्थानीय ज्ञान के साथ सीख सकें। इस स्तर पर सूचना संकलन, प्रक्रियात्मक कुशलता एवं संवाद कौशल पर अधिक ध्यान होगा।

2. सभी जनजाति समुदायों की अपनी स्वयं की लोक कला है और परम्परा से ही वे कुशल कारीगर हैं, इसलिये इस स्तर के पाठ्यक्रमों में कला एवं शिल्प पर पर्याप्त जोर होगा। स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों परम्परागत व्यवहारों, स्थानीय भूगोल, सामाजिक परम्पराएं एवं जीवन, परम्परागत एवं समुचित तकनीक ये सब पाठ्यक्रम एवं मूल्यांकन के भाग हो सकते हैं।

3. इस स्तर पर पूर्व व्यावसायिक शिक्षा (कोर्स) को जोड़ा जा सकता है। जनजाति बच्चे अपने प्राकृतिक निवास स्थानों (वन), कृषि, जंगल से खाद्य पदार्थों के संग्रह, मछली पालन, भवन निर्माण आदि सम्बन्धित कौशल में निपुण होते हैं। इन्हें उच्च प्राथमिक एवं सेकेण्डरी स्तर के पाठ्यक्रम में जोड़ा जा सकता है। वन सम्पदा एवं पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन का भाव छात्रों के मन में जागृत करने हेतु उपक्रमों को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाय।

4. जनजाति क्षेत्रों के विद्यालयों में पृथक रूप से कौशल विकास का एक कार्यक्रम बनाकर उसे विशेष अभियान के रूप में जोड़ा जा सकता है जैसा कि हाल ही घोषित राष्ट्रीय कौशल विकास नीति 2015 में भी संकल्पित है। उनके क्षेत्रों में खड़ी की जा रही रोजगारों की नई संभावनाओं-अवसरों का उपयोग कर स्वरोजगार एवं कुशल कारीगरों के रूप में प्रशिक्षित हो कहीं लग सकें, इस मिशन का यह लक्ष्य होना चाहिए।

5. जनजाति नायकों, जनजाति स्वतंत्रता सेनानियों एवं जनजातियों की संघर्ष गाथाओं पर पाठ्य सामग्री तैयार करवाई जाए और इनका इतिहास की पूरक पठन सामग्री के रूप में जनजाति एवं गैर जनजाति दोनों क्षेत्रों में उपयोग किया जाए। जनजातीय क्षेत्रों में विभिन्न श्रद्धा के स्थान हैं। इस जानकारी का अंतर्भाग पाठ्यक्रम में हो।

6. सेकेण्डरी स्तर के समाज-विज्ञान विषय के पाठ्यक्रम में जनजातियों से सम्बन्धित महत्वपूर्ण कानूनों, अधिनियमों, योजनाओं को लिया जा सकता है। इससे वे लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं एवं प्राकृतिक संसाधनों पर अपने संवैधानिक अधिकारों से परिचित हो सकते हैं।

7. जनजाति क्षेत्रों में आश्रम शालाएं एक सफल प्रयोग सिद्ध हो चुकी हैं। इन्हें चालू रखा जाए तथा इन शालाओं को एकलव्य तथा कस्तूरबा विद्यालयों की तरह से क्रमोन्नत करने के प्रयास हो। प्रयास ये भी हो कि छात्रावासों एवं विद्यालयों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जाए। जिन प्रखण्डों में 20 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या जनजातियों की है उन सभी में आवासीय विद्यालय खोले जाएं। इन विद्यालयों में प्राथमिकता देकर 25 प्रतिशत विद्यार्थी गैर जनजाति समुदायों के लिये जाएं।

8. कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों के माध्यम से बहुत से दूरस्थ जनजाति क्षेत्रों में सर्व शिक्षा अभियान पहुंच चुका है। इससे आगे की उपयुक्त कड़ी बनाई जाए ताकि जनजाति बालिकाएं विद्यालय की शिक्षा के बाद भी अपनी शिक्षा चालू रख सकें।

9. संभागीय स्तरों पर आदर्श आवासीय खेल विद्यालय खोलने पर विचार हो।

10. जनजाति बहुल जनसंख्या वाले जिलों के सैनिक

विद्यालयों में जनजाति बच्चों के प्रवेश को प्राथमिकता देकर प्रवेश दिया जाए।

11. विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए। जनजाति विद्यार्थियों को विज्ञान विषय लेने हेतु प्रोत्साहित किया जाए। एतदर्थ आवश्यक हो तो जनजाति विद्यार्थियों हेतु पूरक, अतिरिक्त एवं उपायात्मक कक्षाओं की व्यवस्था की जाए। जब तक ऐसी स्थायी व्यवस्था नहीं बने तब तक एतदर्थ चले प्रयोगशालाओं को जोड़ा जाए।

12. *ड्राप आउट छात्रों के कौशल विकास हेतु योजना बने।*

सेकेण्डरी शिक्षा

1. इस स्तर की शिक्षा भावी जीवन निर्माण, आजीविका हेतु नींव डालती है। इस स्तर पर ज्ञान की विभिन्न धाराओं से परिचय एवं उनका स्थानीय पारम्परिक ज्ञान तथा उनके व्यवहार को स्थापित करने की आवश्यकता होती है। इसलिये उच्च स्कूली शिक्षा के इस स्तर पर स्थानीय परम्परागत ज्ञान, भाषा-बोली से सम्बन्धित कुशलता एवं व्यवहार, इतिहास एवं विज्ञान (जैसे जीव विज्ञान, वनस्पति, रसायन, पर्यावरण विज्ञान आदि) विषयों को इस स्तर के पाठ्यक्रम में जोड़ना चाहिए। प्रत्येक सेकेण्डरी स्कूल में स्थानीय शिल्पकला एवं धातुओं-पदार्थों से युक्त संग्रहालय तथा परम्परागत धातु शिल्प कला को सुरक्षित करने वाली आधुनिक विज्ञान यंत्रों सहित एक कार्यशाला एवं कम्प्यूटर प्रयोगशाला हो।

2. इस स्तर पर विद्यार्थियों को अपनी स्थानीय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित किसी विधा पर विशेषज्ञता विकसित करनी चाहिए, विशेषकर लघु वनोपजों या खनन में। राष्ट्रीय कौशल विकास नीति 2015 में भी इसका विचार हुआ है।

3. जनजाति विद्यार्थियों को देय सामान्य छात्रवृत्ति के साथ-साथ सर्वोच्च अंक प्राप्त करने वाले 5 प्रतिशत विद्यार्थियों हेतु योग्यता छात्रवृत्ति शुरू की जाए। इससे विद्यार्थी उच्च शिक्षा हेतु प्रोत्साहित होंगे।

4. इस स्तर पर जनजाति एवं गैर जनजाति विद्यार्थियों के विनिमय (Exchange) कार्यक्रम की रचना करने की आवश्यकता है। इससे समाज में जनजाति, गैर जनजाति दूरी को मिटाने में सहायता मिलेगी। (साथ ही एक दूसरे के परिवेशीय ज्ञान का भी आदान प्रदान होगा)। जनजाति क्षेत्र के योग्य-प्रतिभावान विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा संस्थानों में अवकाशकालीन निवासी शिक्षा (फैलोशिप) हेतु कार्य करने का अवसर दिया जा सकता है।

उच्च शिक्षा

1. जनजाति बहुल प्रखण्डों के प्रखण्ड स्तर पर कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालयों के अतिरिक्त एक पोलिटेक्निक एवं अभियांत्रिकी महाविद्यालय बनाने के प्रयास हों।

2. अनुसूचित क्षेत्रों के प्रत्येक विश्वविद्यालय में जनजाति अध्ययन का एक पृथक पूर्ण पक्षीय विभाग हो। राजस्थान से लेकर उड़ीसा तक एवं उत्तर-पूर्व की जनजाति पट्टी के सभी राज्यों में केन्द्रीय जनजाति विश्वविद्यालय खोले जाएं। राष्ट्रीय स्तर पर भी एक जनजाति विश्वविद्यालय खुले जिसमें जनजातियों से प्रत्यक्षतः जुड़े सभी संकायों की उच्च शिक्षा एवं शोध हो सके।

3. जनजाति विद्यार्थियों के अखिल भारतीय प्रतियोगी परीक्षाओं में प्रवेश, जेईई, पीएमटी, संघ लोकसेवा आयोग आदि की तैयारी को प्रोत्साहन, समर्थन एवं सुविधा खड़ी करने हेतु विशेष संस्थानों को खोला जाए। महाराष्ट्र जैसे कुछ राज्यों ने ऐसी संस्थाओं के सफल प्रयोग किए हैं। इसी प्रकार वरिष्ठ माध्यमिक शिक्षा के बाद भावी जीवन की तैयारी में मार्गदर्शन करने हेतु भी विशेष प्रकोष्ठों की रचना हो।

4. अन्य देशों के विश्वविद्यालयों से मिलकर विशेष कार्यक्रमों की रचना हो ताकि जनजाति विद्यार्थियों का आदान-प्रदान कर कई विषयों की वैश्विक समझ

विकसित हो। एतदर्थ विशेष फैलोशिप एवं छात्रवृत्तियों की व्यवस्था हो।

5.प्रचुर जनजाति जनसंख्या वाले सभी जिलों में एक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान खोला जाए। इन संस्थानों के पाठ्यक्रम में जनजातियों का इतिहास, संस्कृति एवं जीवन शैली से सम्बन्धित जानकारियों को सम्मिलित किया जाए।

6. जनजातियों में सामुदायिक जीवन जीने, साथ-साथ मिलकर काम करने आदि की स्वाभाविक आदतें हैं। इन आदतों को विकसित करने एवं इन्हें समर्थन देते हुए प्रतिभावान जनजाति युवकों को योग्य सामुदायिक नेता के रूप में बनाने के लिये ग्रामीण प्रबंधन संस्थान, आनंद जैसी संस्थाओं को खोला जाए। अर्थात् जनजाति प्रबंध संस्थान खोले जाएं।

7.जनजाति क्षेत्रों के विद्यालयों-महाविद्यालयों में विशेष एन.सी.सी. प्रशिक्षण ईकाइयां बनाई जाएं। इसके साथ ही जनजाति युवाओं को पुलिस एवं सशस्त्र बलों में भर्ती हेतु प्रोत्साहन व सुविधा देने के विशेष प्रयास किए जाएं।

8.ऊपर दिए गए प्रस्तावों को प्रभावी बनाने, एतदर्थ प्रस्तावित पाठ्यक्रमों को गहराई एवं विस्तार देने में स्थानीय समुदायों एवं स्वैच्छिक अभिकरणों सहयोग व सहभागिता की आवश्यकता होगी। शिक्षा के सभी स्तरों पर इस प्रकार का सक्रिय सहयोग एवं सहभाग मांगा जाए तथा उसका स्वागत किया जाए।

9.अन्य पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों हेतु उपलब्ध उच्च शिक्षा की छात्रवृत्ति की राशि तथा उनकी पात्रता में बहुत अंतर है। इसलिये इस प्रकार की व्यवस्था की जाए जिसमें यह सुनिश्चित हो कि तीनों श्रेणियों में समानता होगी और कोई भी वृद्धि या परिवर्तन समान रूप से स्वत: ही प्रभावी हो सकेगा।

जनजातीय क्षेत्र को पूर्णरुप से साक्षर बनाने के लक्ष्य को समयबद्ध तरीके से पूर्ण करने के लिए ग्रामीण क्षेत्र में प्रारंभिक शिक्षा के कार्य को गति देना आवश्यक है। ❑

प्रेरक प्रसंग

मणिपुर में छात्रावास की बहनों ने सेना का सहयोग किया

- माधवी जोशी, अ.भा.महिला प्रमुख

मणिपुर की दो बहनें **कु. डरिंग मरिंग** और **कु. डरिंगा मरिंग** कल्याण आश्रम द्वारा संचालित रायपुर छात्रावास में 8वीं एवं 5वीं कक्षा में पढ़ती थीं। ग्रीष्मकालीन छुट्टियों में वे दोनों बहनें मणिपुर अपने ग्राम में गईं। उस समय मणिपुर के पहाड़ी इलाकों में दो जनजातियों के बीच लगातार संघर्ष चल रहा था। इसलिए उस क्षेत्र में सेना की गश्त चलती रहती थी। सेना के लोग हिन्दी भाषी थे अत: वहाँ के स्थानीय लोगों को समझाना बहुत मुश्किल हो रहा था। एक दिन डरिंग और डरिंगा अपने गांव के बाजार में जा रही थी। वे परस्पर हिन्दी में वार्तालाप कर रही थीं। उनकी बातें सुनकर सेना के लोग उनके पीछे-पीछे घर तक पहुँचे। घर के पास पहुँचने पर उन्होंने बहनों से पूछा कि ''आप दोनों इतनी अच्छी हिन्दी कैसे बोल लेती हो?'' बहनों ने रायपुर छात्रावास में अपनी शिक्षा की बात बतलाई। सेना के जवानों और बहनों में परस्पर वार्तालाप हुआ। सैनिकों ने अपनी भाषा वाली समस्या बताई और कहा कि, ''हम लोगों ने यहां की बहनों को फल परीक्षण का प्रशिक्षण देने की योजना बनाई है। आप दोनों बहनें हमारे साथ दुभाषिये का कार्य करेंगी तो प्रशिक्षण देने में हमें सुविधा होगी।'' इन दोनों बहनों ने सैनिकों के इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकारा और दुभाषिये का काम बहुत अच्छे ढंग से किया। उसके बाद उस गांव में सामाजिक समरसता निर्माण हुई। सेना के लोग इन बहनों को **'रायपुरवाली माँ'** संबोधन से पुकारने लगे। छात्रावासों के संस्कारों के कारण समाज में परिवर्तन आया है। अनेक बहनें अपने-अपने क्षेत्र में अच्छा वातावरण निर्माण कर रही है एवं आर्थिक उन्नति की ओर अग्रसर हो रही हैं। ❑

एकल विद्यालय : उद्देश्य एवं परिकल्पना

गुमला में स्व. भाउराव देवरस (तत्कालीन अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम एवं विद्या भारती के प्रभारी) एवं माननीय श्याम जी गुप्त (तत्कालीन क्षेत्रीय संगठन मंत्री) की पावन उपस्थिति में आयोजित सेमिनार के मुख्य बिंदु)

वनवासी कल्याण आश्रम का कार्य शिक्षा से प्रारंभ हुआ। 1952 में जशपुर नगर में छात्रावास से कार्य प्रारंभ हुआ और कुछ वर्षों में सैकड़ों विद्यालय जशपुर क्षेत्र में प्रारंभ हो गये । इन विद्यालयों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में जागरण का प्रभावी कार्य प्रारंभ हुआ।

एकल विद्यालय की कल्पना वनवासी कल्याण केन्द्र बिहार के तत्वावधान में गुमला में 20 से 22 मई 1985 को एक संगोष्ठी का आयोजन, विद्याभारती (अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान) के तत्वावधान में आयोजित हुआ।) अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम के पदाधिकारी के नाते अध्यक्ष मा. बाला साहब देशपाण्डे एवं महामंत्री मा. मिश्री लाल तिवारी, मंत्री डॉ. प्र.दा. सप्रे तथा विद्याभारती के संगठन मंत्री श्री लज्जाराम तोमर, महामंत्री श्री दीनानाथ बत्रा, श्री के. श्रीवास्तव, बिहार के श्री गंगाधर दुबे, श्री देवी प्रसाद वर्मा, संघ के प्रान्त प्रचारक श्री मधुसूदन देव व श्री शंकर तिवारी, श्री मदन लाल अग्रवाल, वनवासी कल्याण केन्द्र बिहार के श्री कृष्णचन्द्र भारद्वाज व कृपा प्रसाद सिंह के अलावा अन्य 45 कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। 3 दिवसीय इस संगोष्ठी में वनवासी क्षेत्र के ग्रामीण बच्चों की पढ़ाई कैसे हो यही मूल मुद्दा रहा विभिन्न लोगों के पेपर प्रस्तुति के पश्चात् सर्वसम्मति से यह निर्णय किया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों खासकर वनवासी गांवों के बच्चे प्रतिदिन 2 घण्टे के लिये एक स्थान पर एकत्रित होवें। आधे-आधे घण्टे के 4 सत्रों में बच्चों को विभिन्न प्रकार के ज्ञान व संस्कार की व्यवस्था हो। प्रथम सत्र में बच्चों की साफ-सफाई, केश सज्जा व वेश-भूषा का विशेष ध्यान रहे। दूसरे सत्र में बच्चों को साक्षरता का ज्ञान क से ज्ञ तक, 1 से 100 तक की पढ़ाई कराई जाये। इसके लिये शिक्षा को सुगम बनाने हेतु प्रकाशित चार्ट का प्रयोग किया जाये। 3 माह के बाद बच्चों को चार्ट के माध्यम से पशुओं, पक्षियों, फलों, सब्जियों तथा खाद्यान्नों की शिक्षा दी जाए। तीसरे सत्र में बच्चों को देश के महापुरूषों की जीवनी पढ़ाई जाये व लिखित रूप में उनकी जीवनी भी उपलब्ध कराई जाये। चौथे सत्र में राष्ट्र भक्ति के गीत सिखाये जायें तथा भारत मां की प्रार्थना सिखाई जाये। इतना होने से बच्चों में शिक्षा निर्माण के साथ-साथ बुद्धि विकास एवं स्वाभिमान निर्माण कार्य स्वत: हो पायेगा। गोष्ठी में भाग ले रहे विद्वानों का मत था कि इतना होने से वनवासी ग्रामों के बच्चे नगरीय बच्चों की तरह तेज व स्वावलम्बी बनेंगे। एक ग्राम के 50-60 बच्चे एक स्थान पर प्राय: सायं 5.30 से 7.30 बजे तक एकत्रित होते हैं। सामान्यत: किसी बड़े पेड़ के नीचे या किसी प्रमुख व्यक्ति के द्वार (वराण्डा) पर बच्चे एकत्रित होते हैं। एक दरी की व्यवस्था आश्रम की ओर से रहती है। शिक्षक लालटेन की व्यवस्था स्वयं करते हैं। एक रजिस्टर में सभी बच्चों के नाम, उम्र व उनके पिताजी का नाम लिखा जाता है। सरस्वती माता का एक चित्र भी होता है जिनके समक्ष प्रार्थना होती है व विद्या की याचना की जाती है। कल्याण आश्रम व विद्याभारती की यह योजना पूरे देश में सफल हुई और वनवासी कल्याण आश्रम व विद्याभारती के अलावा वनबंधु परिषद व संघ परिवार के विभिन्न संगठनों ने इसे आन्दोलनात्मक तौर पर लिया। आज यह कार्यक्रम पूरे देश के अलावा भारत के पड़ोसी देशों में भी संचालित हो रहा है। विगत कुछ वर्षों में एकल विद्यालय का यह कार्यक्रम, ग्राम विकास का एक सशक्त माध्यम बना है। ग्रामीण विकास में सामाजिक कार्यकर्ताओं के साथ-साथ ग्रामीणों की सराहनीय सहभागिता हुई है। कई प्रान्तों में प्रान्तीय सरकारों ने भी इस कार्यक्रम को हाथ में लिया है। ❑

कल्याण आश्रम का शिक्षा प्रकल्प

- डॉ. प्रसन्न सप्रे, कार्यकारिणी सदस्य, अ.भा.वनवासी कल्याण आश्रम

कल्याण आश्रम की स्थापना एक स्पष्ट और निश्चित उद्देश्य को लेकर हुई थी। वर्ष 1952 में वनवासी समाज की स्थिति कैसी थी, उसकी कल्पना करना भी कठिन है। वनवासी समाज में शिक्षा का प्रतिशत मात्र एक अंक में ही बताया जा सकता था। दो-ढाई सौ जनसंख्या वाले गांव में मुश्किल से 2-3 वयस्क (बालिग) व्यक्ति ही पढ़े लिखे या कहें मात्र साक्षर होते थे। ग्रामीण प्राथमिक शाला में थोड़े से ही बालक दिखते थे। गांव में शासकीय अधिकारी वाहन से पहुंचते थे तब वाहन की आवाज सुनकर ही कई वनवासी पुरुष गांव के बाहर चले जाते थे। इसका 1960 में मैंने भी अनुभव किया था। अत: हम समझ सकते हैं कि यह क्षेत्र कितना पिछड़ा हुआ था। शेष क्षेत्र में समाज से यह कटा हुआ था ऐसी स्थिति थी। पिछड़ापन, गरीबी,अशिक्षा का मानों चोली-दामन का साथ था। समाज की ऐसी स्थिति में तब स्वाभाविक रुप से बच्चों के लिए पाठशाला खोलना, यही सामाजिक संस्थाओं का प्राथमिक रुप से कार्य रहता था। पूज्य ठक्कर बापा द्वारा स्थापित भील सेवा मंडल द्वारा भी इसी कार्य को प्राथमिकता दी गई थी। समाज को शिक्षित व जागरुक करने के लिए यह कार्य स्वाभाविक रुप से सबसे महत्वपूर्ण हो जाता है। वनवासी समाज को जागृत करना, संगठित करना, उसको अपना सर्वांगीण विकास करने के लिए प्रेरित करना और राष्ट्रीय जीवन प्रवाह से फिर से समरस हो, ऐसा आश्रम का उद्देश्य रहा है। अत: इसके लिए प्रथम माध्यमिक शाला को प्रारंभ करने का निर्णय लिया गया। परंतु समाज में उपरोक्त परिवर्तन किस ढंग से आ सकता है इस पर भी विचार हुआ। समाज को गतिमान करनेवाला कोई नेतृत्व रहेगा तभी वह विकास के लिए प्रयत्न करेगा। ऐसा नेतृत्व ग्रामों के स्तर से लेकर उत्तरोत्तर बड़े स्तर का, कम से कम दो-चार जिले के स्तर तक का तो अवश्य ही चाहिए या कम से कम एक विशिष्ट जनजाति को प्रेरित करने वाला नेतृत्व रहना चाहिए। दूसरी अति महत्वपूर्ण बात है '**नेतृत्व निर्माण**'। समाज को नेतृत्व देनेवाले व्यक्ति का गठन महत्वपूर्ण हो जाता है। ऐसा व्यक्ति जन्मजात भी हो सकता है, परंतु उसके जन्म की अनिश्चित समय तक राह देखना बुद्धिमानी नहीं है। ऐसा नेतृत्व उसी समाज में से विकसित हो ऐसा प्रयास करना आवश्यक है। अन्य क्षेत्र से आये हुए व्यक्ति एक गांव को विकसित करने की यदि प्रेरणा दे सका तो भी उसका कार्य स्थायी रुप ग्रहण करेगा कि नहीं यह प्रश्न रहेगा। कार्य भी अति सीमित क्षेत्र में रहेगा। अत: बड़े स्तर पर उसी समाज में से ग्राम-ग्राम में नेतृत्व रहे यह आवश्यक रहेगा। यदि पाठशाला में पढ़ रहे बालकों को यथायोग्य संस्कारित करने का कार्य शुरु किया जाये तो उनमें से ही वांछित नेतृत्व का निर्माण हो सकता है। ऐसा व्यक्ति उच्च चारित्र्य से युक्त, नि:स्वार्थ, अपने समाज के उत्थान के लिए दृढ संकल्प से जीवन भर कार्य करनेवाला और चाहे जिस परिस्थिति में हो उसमें से ही मार्ग निकालने की चेष्टावाला गांव में भ्रमण करेगा तभी समाज को वह गतिशील, विकासमान कर सकता है। परंतु व्यक्ति को संस्कारित करने का कार्य तुरंत होनेवाला नहीं है। व्यक्ति का गठन हो इसके लिए सातत्य से संस्कार देना पहली आवश्यकता है। इतना ही नहीं, संस्कारित करनेवाला व्यक्ति भी उच्च चारित्र्य से युक्त, नि:स्वार्थ, लगनशील, समाज से प्रेम करनेवाला और राष्ट्रभक्त होना भी आवश्यक है। यदि इन गुणों में

न्यूनता रही तो कार्य की दिशा बदल जाएगी, समाज की हानि होगी। अस्तु, कल्याण आश्रम द्वारा जिस दिन माध्यमिक शाला की स्थापना हुई उसी दिन बालक छात्रावास की भी स्थापना हुई। छात्रावास की दिनचर्या भी संस्कारक्षम बनाई गई। प्रात: 4:30 बजे जागरण से लेकर रात्रि के 9:30 बजे विश्राम के समय तक के समयावधि में व्यायाम, भारतभक्ति स्तोत्र, जशपुर क्षेत्र में प्रचलित रामचरित मानस का पाठ, शाम को खेलकूद, रात्रि में स्थानीय भजन-कीर्तनादि के कार्यक्रम के साथ स्वाध्यायादि का समय भी निश्चित रहता था। समय-समय पर परंपरागत उत्सवों का आयोजन, भारत के महानुभावों से वार्तालाप-प्रश्नोत्तर के कार्यक्रमों का आयोजन भी होता रहता है। इसके कारण छात्रों पर वांछित संस्कार होते जाते हैं। स्वावलंबन को भी छात्रावास में महत्व दिया जाता है। विविध कार्यक्रमों के संचालन का अवसर छात्रों को दिया जाता है। अतएव बालकों में अनुशासन, अध्ययनशीलता, परिश्रमशीलता, समाज और राष्ट्र की जानकारी, इसके लिए जीवन में कुछ करने की प्रेरणा जगने लगती है। छात्रावास अधीक्षक का भी प्रेरक जीवन अनुकरणशील छात्रों के समक्ष सदैव रहता है। मानों चरित्र के, व्यक्तित्व के, नेतृत्व के गठन के लिए आवश्यक सारा वातावरण सदैव ही बना रहता है। इसलिए आश्चर्य नहीं है कि इन्हीं छात्रावास के छात्रों में से कल्याण आश्रम को कार्यकर्ता मिलते रहते हैं। जो वापस अपने ग्राम में जाते हैं वे ग्राम के लिए, ग्रामवासियों का नेतृत्व करते हुए, सदैव कार्यशील रहते हैं। इतना ही नहीं वे अपने जिले, प्रांत या देश के नेतृत्व को देनेवाले लोगों में कल्याण आश्रम के भूतपूर्व छात्र अच्छी संख्या में देखने को मिलेंगे। स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा के संबंध में व्यक्त किए गए विचारों में कहा था कि शिक्षा का उद्देश्य केवल विविध विषयों की जानकारियों को मस्तिष्क में ठूंसना ही नहीं होना चाहिए अपितु इसके साथ में शिक्षा का उद्देश्य तो उच्च चारित्र्य से संपन्न, मजबूत मांस-पेशियों से युक्त उत्तम स्वास्थ्य वाला, अपने पैरों पर खड़ा होकर अपना भौतिक-चारित्रिक-आध्यात्मिक विकास करनेवाले व्यक्ति के निर्माण का होना आवश्यक है। *कल्याण आश्रम की शालाएं एवं छात्रावासों के माध्यम से यही प्रयास सातत्य से हो भी रहा है और वनवासी क्षेत्र में विकास की, राष्ट्रीय दृष्टि से भावात्मक एकात्मता की गंगा धारा अन्य क्षेत्रों में भी बहती हुई दिखाई दे रही है।* कल्याण आश्रम के कार्य की सफलता का यही मापदंड भी है। आज कल्याण आश्रम द्वारा संचालित शालाओं में एक लाख तीस हजार से अधिक बालक-बालिकाएं शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। विभिन्न छात्रावासों में लगभग आठ हजार से अधिक बालक-बालिकाएं रहकर शिक्षित हो रहे है और इससे भी महत्वपूर्ण बात है कि वे संस्कारित हो रहे हैं। यह कार्य प्रत्येक राज्य में चल रहा है। अत: हम कल्पना कर सकते हैं कि वनवासी समाज में व्यापक रुप से अच्छी दिशा में परिवर्तन हो रहा है। परंतु सारे भारत में जनजातियों की जनसंख्या 10-11 करोड़ है और लगभग पौने दो लाख ग्राम-बस्तियों में वे बसते हैं। अभी तो कल्याण आश्रम की पहुंच अति सीमित है। अत: कल्याण आश्रम द्वारा संचालित विभिन्न आयामों के ग्राम-ग्राम के प्रकल्पों की संख्या पांच-छ: गुना बढ़े यह आवश्यक है। सारे वनवासी ग्रामों में कल्याण आश्रम का संदेश एवं प्रभाव पहुंच रहा है ऐसा हम कह सकते हैं। इस कार्य को शीघ्र पूरा करने के लिए सभी से नम्र निवेदन है कि वे तन-मन-धन से अधिकाधिक मात्रा में सहयोग देते रहे और नये व्यक्तियों को भी इस कार्य में सहयोग देने के लिए प्रेरित करते रहें। ❑

कल्याण आश्रम : शिक्षा हेतु प्रयास

- कृपा प्रसाद सिंह, उपाध्यक्ष, अ.भा.वनवासी कल्याण आश्रम

कल्याण आश्रम की स्थापना ही शिक्षा प्रकल्प से हुई। 1952 में सी.पी.बरार नामक राज्य के अति पिछड़े तहसील जशपुर में एक छात्रावास से कल्याण आश्रम का कार्य प्रारंभ हुआ। आश्रम के संस्थापक श्रद्धेय बाला साहब देशपाण्डे ने अपने प्रयास से जशपुर के राजा विजयभूषण सिंह देव से संपर्क कर उनका सहयोग प्राप्त किया। उन दिनों शिक्षा की बहुत बदतर स्थिति इस क्षेत्र में थी। सरकार की ओर से एक-मात्र विद्यालय चलता था। शेष विद्यालय चर्च द्वारा संचालित थे। इन विद्यालयों में नामांकन के समय चर्च से निर्देश होने के कारण गैर इसाई छात्र व उनके अभिभावकों से कुछ इस प्रकार का व्यवहार करते थे जिससे इन्हें गैर इसाई होने पर संकोच होता था। बहुत प्रयास करने पर यदि नामांकन हो जाता भी था तो छात्र का नाम या उसका सरनेम बदल देते थे जिससे आगे चलकर उसे इसाई समुदाय या चर्च के साथ जुड़ने के लिए बाध्य होना पड़ता थाा।

आजादी के तुरन्त बाद आदिम जाति सेवा मंडल की स्थापना श्रद्धेय ठक्कर बापा के नेतृत्व में हुई। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी (भारत के प्रथम राष्ट्रपति) इसके अध्यक्ष मनोनीत किये गये। संपूर्ण देश में वनवासी शिक्षा का कार्य सभी वनवासी बहुल जिलों में यथाशीघ्र ग्रामों तक पहुँचे, इसका प्रयास हुआ। श्रद्धेय बाला साहब उसी योजना के तहत जशपुर पहुँचे थे। कल्याण आश्रम की योजना इसी मूल उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही थी।

उपरोक्त उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्राथमिक विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, उच्च विद्यालय, महा विद्यालय, एकल शिक्षक विद्यालय, बालवाड़ी, बालमन्दिर, बाल संस्कार केन्द्र, रात्रि पाठशाला, निःशुल्क शिक्षा केन्द्र, छात्रावास का कार्य जशपुर से प्रारंभ हुआ लेकिन इसका विस्तार अन्य सभी प्रान्तों में गति से हुआ। *आज की तिथि में उच्च एवं माध्यमिक विद्यालय-46, प्राथमिक विद्यालय 101, पूर्व प्राथमिक विद्यालय-83, एकल शिक्षक विद्यालय 2229, बालवाड़ी 279, बाल संस्कार केन्द्र 770, साप्ताहिक संस्कार केन्द्र 518, रात्रि पाठशाला 126, निःशुल्क कोचिंग केन्द्र 341, पुस्तकालय वाचनालय 61, अनौपचारिक शिक्षा 8, बालक छात्रावास 178 एवं कन्या छात्रावास 46, शिक्षा के प्रकल्प कल्याण आश्रम चलाये जा रहे हैं, जिसमें 137024 छात्र अध्ययनरत हैं।*

भारत के 61 हजार राजस्व ग्राम व उसके 1,82,000 टोलों में शिक्षा का यह कार्य यथा शीघ्र होने की आवश्यकता है। प्राचीन भारत की शिक्षा पद्धति व आधुनिक भारत की आवश्यकतानुसार शिक्षा नीति बनाना देश की सुरक्षा के लिए आवश्यक हो गया है। कल्याण आश्रम की शिक्षा टोली समय-समय पर बैठकर इस विषय पर चिन्तन करती है और युगानुकूल बच्चों में संस्कार, सामान्य ज्ञान, राष्ट्रीयता, महापुरुषों की जीवनी, राष्ट्रीय पशु-पक्षी, फसल व फल, सब्जी व अन्य व्यवहारिक जानकारी देने की समुचित व्यवस्था रहती है।

कल्याण आश्रम की इस शिक्षा नीति का सुखद परिणाम यह हुआ है कि जनजातीय बच्चों में स्वतंत्रता सेनानियों व भारतीय संत महात्माओं व सामाजिक कार्यकर्ताओं के प्रति सम्मान व समर्पण बढ़ा है। सामान्य बच्चों की तरह जनजातीय बच्चे भी मेधावी एवं प्रवीणता के गुणों से सम्पन्न हो सके हैं। **आश्रम के छात्र डॉक्टर, इंजीनियर, पुलिस अधिकारी व वकील तथा प्राध्यापक बने हैं।** सामाजिक कार्य में भी जनजातीय युवक-युवतियों की संख्या बढ़ी है। कल्याण आश्रम के पूर्णकालीन कार्यकर्ताओं में 80 प्रतिशत जनसंख्या जनजातीय युवक-युवतियों की है।

आजादी के पश्चात् पृथक राष्ट्रवाद की आवाज जम्मू-कश्मीर से लेकर नागालैण्ड व मिजोरम तक सुनाई पड़ती थी। धर्मनिरपेक्षता के नाम पर हिन्दुत्व के भावना को दबाना एवं अल्पसंख्यक के नाम पर चर्च व मस्जिद के द्वारा संचालित विद्यालयों की संख्या बढ़ाना, वार्षिकोत्सव के समय जमकर हिन्दुत्व की आलोचना तथा चर्च व मस्जिद द्वारा संचालित विद्यालयों को विकासवादी बताना यह उन विद्वानों का फैशन सा हो गया। कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता शांतिपूर्वक कार्य करते हुए जनजातीय युवकों व छात्र-छात्राओं के मध्य फैले इस विषैले विचार को अपने अथक परिश्रम से सामान्य व प्राकृतिक स्वरूप में लाने का प्रयास कर रहे हैं।

आश्रम के शिक्षा प्रकल्प वनवासी ग्रामों में राष्ट्रीय भाव जागृति का न केवल माध्यम बने हैं परन्तु इसका परिणाम जनजातीय नेतृत्व पर भी पड़ा है। कल्याण आश्रम का कार्यकर्ता राष्ट्रीय कार्य में लगा। राजनीति से हमारे कार्य का दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं है परन्तु राष्ट्रीयता के वृक्ष के नीचे देशभक्ति के फल तो समय-समय पर गिरते हैं और उसका लाभ राजनीतिज्ञों को भी मिलता है। राष्ट्रीय कार्य एक तपस्या का कार्य है और इस पवित्र कार्य को कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता सेवा प्रकल्पों के माध्यम से बड़ी प्रमाणिकता से कर रहे हैं। **राष्ट्रीय भाव का यह परिणाम है कि भारत सरकार के सम्मान के जो मानदण्ड या मानक निर्धारित हैं उसमें कल्याण आश्रम के न केवल छात्र अपितु संस्थान विद्यालय व चिकित्सालय पुरस्कृत हो रहे हैं।** आश्रम के ये सारे प्रयास सामाजिक सहयोग से संचालित हो रहे हैं अत: इस पुरस्कार का सारा श्रेय कार्यकर्ताओं के साथ-साथ आर्थिक रूप से मदद कर रहे सामान्य दानदाताओं को भी जाता है। आश्रम का कार्यकर्ता इस पुनीत कार्य को भारतमाता की सेवा के रूप में करता है और शायद भारतमाता के प्रति यही सम्मान हमारी संगठनात्मक शक्ति भी है। ❑

प्रेरक प्रसंग

छात्रावास के संस्कारों ने नागालैण्ड में देशभक्ति की ज्योति जलाई

- माधवी जोशी, अ.भा.महिला प्रमुख

उत्तर पूर्वांचल के अनेक प्रांतों में किसी न किसी कारण से आंदोलन, बंद इत्यादि चलते रहते हैं, इस कारण से वहाँ के स्कूल-कॉलेजों में पढ़ाई ठीक से नहीं हो पाती। स्थानीय लड़के-लड़कियों के लिए 1982 से छात्रावास चलाये जा रहे हैं। छत्तीसगढ़, रायपुर में 1984 में नागालैण्ड की 8 छात्राओं को लाकर छात्रावास आरंभ किया गया। वर्तमान में इस छात्रावास से सौ के ऊपर छात्रायें अपनी स्नातक/स्नातकोत्तर की शिक्षा खत्म कर अपने प्रांत में वापस जाकर 'घर-गृहस्थी' के दायित्वों का निर्वाह करते हुए बतौर हिन्दी शिक्षिका के नाते नौकरी कर रही हैं।

इनमें से नागालैण्ड की कु.हमसाईन्दी नाम की बहन दिमापुर से करीब 250 किलोमीटर दूर के गांव के स्कूल में नौकरी कर रही है। रायपुर छात्रावास में प्राप्त हुए राष्ट्रभक्ति के संस्कारों के कारण 15 अगस्त के कार्यक्रम के लिए उसने स्कूल के छात्रों को हिन्दी में राष्ट्रभक्ति पर आधारित गीत सिखाये एवं वंदेमातरम् भी सिखाया। 15 अगस्त के कार्यक्रम में छात्रों ने इन गीतों की प्रस्तुति दी। कार्यक्रम में तत्कालीन सेना के अधिकारी आये थे। उन्होंने छात्रों की इस प्रस्तुति को सुनकर पूछा- ''इतने सुन्दर सुरीले हिन्दी गीत किसने सिखाये?'' हमसाईन्दी का उनसे परिचय कराया गया। सेना के वे अधिकारी बहुत खुश हो गये, उन्होंने कहा कि *नागालैण्ड के इस क्षेत्र में राष्ट्रभक्ति की ज्योति पहली बार दिखाई दी है। ऐसा वातावरण पहले कभी भी दिखाई नहीं दिया था।* वहां के बच्चों को सेना के कार्यक्रम में गीत गाने के लिए आमंत्रित किया गया। इस प्रकार रायपुर के छात्रावास से संस्कार पाकर एक बहन ने नागालैण्ड के संवेदनशील इलाके में देशभक्ति की ज्योति जला दी। ❑

कल्याण आश्रम के छात्रावास

- निशिकांत जोशी, अ.भा.छात्रावास प्रमुख

कुमारी प्रतिमाला चकमा, कक्षा-8, रायपुर के शबरी कन्या छात्रावास की छात्रा छुट्टियों में मिजोरम स्थित अपने घर गयी। ग्राम में उसने देखा कि गांव के बच्चे गलियों में खेल रहे हैं। उसने पूछा-क्यों रे स्कूल क्यों नहीं गए? बच्चे बोले - स्कूल बंद है। क्यों? - स्कूल घर की छत से पानी चू रहा है, जमीन गीली रहती है - बैठ ही नहीं सकते। शिक्षक भी नहीं आते इसलिये स्कूल भी बंद ही रहता है।

प्रतिमाला ने स्कूल में जाकर देखा - घास-फूस से बनाया घर, जिसकी छत बहुत खराब है पर सुधारी जा सकती है। उसने गांव की महिलाओं को एकत्रित किया - विषय रखा कि विद्यालय की छत खराब होने के कारण चू रही है। बच्चे बैठ नहीं सकते, क्या करना चाहिये? सबने मिलकर तय किया जंगल से घास काटकर लाएंगे और छत की मरम्मत करेंगे। अगले दिन महिलाएं घास काटने के लिए जंगल जाने लगी तो पुरुषों ने पूछा- कहां जा रही हो? तब उन्होंने उत्तर दिया कि घास बिछाकर स्कूल की छत ठीक करने जा रहे हैं। पुरुषों कहा कि बांस भी सड़ गये हैं- हम बांस लाते हैं, आप सभी घास लायें पूरी छत नई बना देंगे।

2-3 दिनों में छत बन गयी। सप्ताह भर में जमीन सूख गयी। शिक्षक भी आ गये, स्कूल प्रारंभ हो गया। प्रेरणा बनी कल्याण आश्रम के छात्रावास में पढ़ रही 8वीं कक्षा की एक छात्रा-प्रतिमाला चकमा।

जनजाति क्षेत्र में शिक्षा की दयनीय अवस्था के बारे में हम सबको मालूम है। अवस्था के सुधार हेतु शासन के साथ अनेक एन.जी.ओ. भी प्रयास कर रहे हैं। परंतु सफलता बहुत दूर है, कुछ दूरस्थ ग्राम ऐसे हैं कि जहां स्कूल तो खुल गये हैं परंतु शिक्षक वहां जाने को एवं वहां रहने को तैयार नहीं हैं। इसीलिये स्कूल चलता ही नही है। कुछ माता-पिता भी ऐसे हैं कि जिनके लिये बच्चे का स्कूल जाने से अधिक महत्वपूर्ण कार्य बकरियां चराना है। कुछ ग्राम में केवल प्राथमिक विद्यालय है - आगे की पढ़ाई के लिये बच्चों को अन्य ग्रामों में जाकर रहना होगा, जो कुछ लोगों के लिये असंभव होता है। उनके लिए कुछ व्यवस्था आवश्यक है। ऐसी अवस्था में केवल विद्यालय प्रारंभ करना ही इस समस्या का संपूर्ण समाधान नहीं है।

इसलिये कल्याण आश्रम द्वारा किसी मध्यवर्ती ग्राम में जहां 10वीं-12वीं तक शिक्षा हेतु अच्छे विद्यालय हैं, वहां छात्रावास प्रारंभ किये जा रहे हैं। आसपास के ग्रामों से 5वीं कक्षा उत्तीर्ण छात्रों को छात्रावास में रखकर उनकी उचित व्यवस्था की जाती है। छात्रों का चयन करते समय दूरस्थ अंचल के जहां आवागमन के कोई साधन नहीं हैं, ऐसे क्षेत्र के छात्रों को प्राथमिकता दी जाती है। कुछ जनजातियों में तो शिक्षा के प्रति रुचि निर्माण हुई है और वे स्वयं अपने बच्चों को पढ़ाने हेतु सक्रिय हैं। परंतु कुछ जनजातियाँ ऐसी भी हैं जिनमें बच्चों को पढ़ाने की कोई रुचि नहीं है। वहां प्रयत्नपूर्वक माता-पिता को समझा-बुझाकर बच्चों को छात्रावास में लाना पड़ता है। छात्रावास के नियमबद्ध वातावरण से वे समायोजन नहीं कर पाते हैं और सुविधा मिलने पर भागकर घर चले जाते हैं। उस समय उनके घर जाकर समझा-बुझाकर उन्हें वापस लाना पड़ता है।

छात्रों की उचित शिक्षा हो, यह छात्रावास का प्रथम लक्ष्य है। वे प्रतिदिन विद्यालय में उपस्थित रहें, प्रतिदिन गृहपाठ पूरा करें, प्रति रविवार को सभी पाठ दोहरायें, यह प्रयास रहता है। छात्रों को प्रतिदिन पढ़ने हेतु पर्याप्त समय मिले (छोटे छात्रों को 2-3 घंटा और बड़ों का 4-5 घंटा), इसका भी ध्यान रखा जाता है।प्रत्येक यूनिट टेस्ट का परीक्षा फल देखकर छात्र को किस विषय में कठिनाई आ रही है इसका विचार किया जाता है और उसके

अनुसार उसे उस विषय की व्यक्तिगत रुप से कोचिंग की व्यवस्था की जाती है। आजकल अनेक छात्रावासों का परीक्षाफल शत-प्रतिशत होता है परंतु उससे संतुष्ट न रहकर अधिकतम छात्र प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हों, यह प्रयास किया जा रहा है।

छात्रावासों में 10वीं 12वीं तक की शिक्षा की व्यवस्था है परंतु आगे की पढ़ाई कैसे हो? यह प्रश्न बार-बार उपस्थित होता है। कुछ 10-12 छात्रावासों में 12वीं के बाद की भी व्यवस्था है। कुछ प्रांतों में अच्छे-सक्षम छात्रों को नगरों में रखकर उनकी व्यवस्था की जाती है परंतु आवश्यकता को देखते हुए यह व्यवस्था नगण्य है - ऐसा कहा जा सकता है। जैसे-जैसे संसाधन उपलब्ध होंगे यह व्यवस्था की जायेगी। प्रारंभ में प्रत्येक प्रांत में न्यूनतम एक छात्रावास कॉलेज महाविद्यालयीन छात्रों हेतु हो, यह प्रयास है।

छात्रों के बौद्धिक विकास हेतु विद्यालय की पढ़ाई के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें, समाचार पत्र एवं उन पर चर्चा करना, साप्ताहिक बाल सभा में कुछ जानकारी देना आदि प्रयास होते हैं। बालसभा मे छात्रों को बोलना, भाषण देना - कहानी कहना आदि का भी अभ्यास कराया जाता है। आज के युग में संगणक (कम्प्यूटर) का अभ्यास आवश्यक है। जनसहयोग से यह व्यवस्था धीरे - धीरे सभी छात्रावासों में करने का प्रयास है।

छात्रों के अन्य कलागुण जैसे चित्रकला, संगीत तथा खेलगुणों के विकास हेतु भी प्रयास किये जाते हैं। छात्रों की शारीरिक क्षमता बढ़ाने हेतु प्रात:-सायं नित्य व्यायाम और खेलों की व्यवस्था होती है। इन सब प्रयासों के फलस्वरुप अनेक छात्र उच्च शिक्षा संपन्न हुए हैं। छात्रों में इंजीनियर, डॉक्टर, शासकीय अधिकारी, इनकी संख्या पर्याप्त है। यह सब तो अन्य छात्रावासों में भी कुछ-कुछ प्रमाण में होता ही है। **कल्याण आश्रम की विशेषता है छात्रों को मिलने वाले संस्कार।** प्रात: सूर्योदय से पूर्व प्रारंभ होने वाली दिनचर्या को संस्कारक्षम बनाने के प्रयास होते हैं। **प्रतिदिन के व्यवहार में कभी बोलकर कभी न बोलकर - कभी संकेत से अच्छी आदतें विकसित करने का प्रयास होता है। सफाई, व्यवस्थितता, समयपालन, कष्ट सहकर भी दायित्व पालन करना, बड़ों का सम्मान करना - छोटों को स्नेह देना - बराबरी वालों से मित्रता करना जैसी आदतें उसका अभ्यास बने, यह प्रयास होता है। यह अभ्यास उसे जीवन भर साथ देता है।**

प्रात:स्मरण के समय महापुरुषों का स्मरण, महापुरुषों के स्मरण दिन पर उनके चरित्र का कथन, संघ की शाखा आदि के द्वारा छात्रों को सामाजिक दायित्व बोध और देशभक्ति के संस्कार दिये जाते हैं। छात्रों के छोटे-छोटे गुट बनाकर उन्हें विभिन्न कार्य और कार्यक्रमों का दायित्व सौंपकर उन्हें सामूहिक कार्य और टीम वर्क का अभ्यास और नेतृत्व गुणों का विकास किया जाता है। सामाजिक दायित्व बोध और नेतृत्व गुणों के विकास का एक उदाहरण इस लेख के प्रारंभ में दिया गया है।

छात्रों को सामाजिक कार्य का प्रत्यक्ष अनुभव हो इसलिये निकटवर्ती ग्रामों में नियमित ग्रामीण प्रकल्प चलाना, रक्षा बंधन पर्व पर आसपास के ग्रामों में जाकर राखी बांधना - यथासंभव रक्षाबंधन के कार्यक्रम करना, छुट्टी के दिनों में कुछ ग्राम चुनकर उनमें समाज का संपर्क करना, यात्रा-उत्सवों में सहभागिता करना, आपत्ति-विपत्ति में सेवा कार्य करना आदि प्रयास होते हैं। इसका अच्छा परिणाम छात्रों के व्यवहार में दिखाई देता है। कई भूतपूर्व छात्र कल्याण आश्रम के पूर्णकालीन कार्यकर्ता हैं। प्रांत समिति, जिला समिति, ग्राम समिति आदि विभिन्न समितियों में अनेक भूतपूर्व छात्र सक्रिय हैं। जो प्रत्यक्ष कार्य में सक्रिय नहीं हैं, ऐसे भूतपूर्व छात्र भी समस्या आने पर देश- धर्म - संस्कृति की रक्षा हेतु खड़े होते हैं, यह प्रत्यक्ष अनुभव है। छात्रों के चेहरे पर दिखने वाली प्रसन्नता ही कल्याण आश्रम के छात्रावास की सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। आप एक बार कल्याण आश्रम के छात्रावास में जाइये - छात्रों से अनौपचारिक रुप से मिलिए। प्रत्यक्ष अनुभव से ही आप कल्याण आश्रम के छात्रावास को समझ सकते हैं। ❑

ग्रामीण एवं वनवासी शिक्षा

- ब्रजमोहन मंडल, अ.भा. सह-शिक्षा प्रमुख

शिक्षा एक संस्कार प्रक्रिया है। यह मनुष्य जीवन के परिष्कार एवं विकास की प्रणाली है। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानव शिशु सब प्रकार से विकसित होता है। शिक्षा के द्वारा ही वह अपनी राष्ट्रीयता एवं संस्कृति को ग्रहण करता है। शिक्षा के द्वारा ही शिशु का शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं अध्यात्मिक विकास होता है। समाज-जीवन का प्रवाह शिक्षा के कारण ही गतिशील होता है। अतएव शिक्षा की प्रक्रिया को सामाजिक दृष्टिकोण से देखना आवश्यक है। भारतीय वाङ्मय में इसे ऋषि-ऋण कहा गया है। इस ऋण से उऋण होना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। भारतीय संस्कृति में शिक्षा को पवित्रतम प्रक्रिया माना गया है। गीता में श्रीकृष्ण ने ज्ञान को पवित्रतम कहा है- ''नं हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते''।

भारत गाँवों का देश है। भारत की लगभग 78 प्रतिशत जनसंख्या 6 लाख गाँवों में निवास करती है। लगभग 10 करोड़ का जनजातीय समाज वनों एवं गिरि कन्दराओं में रहता है। भारत की इस ग्रामीण एवं वनवासी जनसंख्या का विचार किए बिना शक्तिशाली राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती। हजारों वर्षों से विदेशी आक्रमणों से संघर्ष करता हुआ हमारा देश विश्व में आज भी सम्मानित राष्ट्र के रुप में खड़ा है, इसका मूल कारण है गाँव में बसा हुआ भारत। भारत में अंग्रेजों के आगमन से पूर्व साक्षरता का प्रतिशत आज से अधिक था। प्रत्येक ग्राम में एक शिक्षकीय विद्यालय हुआ करता था जो उत्तर भारत में टोल तथा दक्षिण भारत में अग्रहार कहलाता था। 'ईस्ट इंडिया कम्पनी' के राज्य के समय सिर्फ बंगाल प्रांत में 80 हजार प्राथमिक विद्यालय थे। इन विद्यालयों की चिंता समाज करता था, इसके कारण शिक्षक और समाज के बीच अटूट संबंध था। शिक्षक की भी सम्पूर्ण चिंता समाज करता था। अंग्रेजों ने इस व्यवस्था को समाप्त करने का पहला प्रहार किया। सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था सरकार ने अपने हाथ में ले ली। इस प्रहार से शिक्षक को समाज से अलग कर दिया। अंग्रेजों के शासन काल में ग्रामों की उपेक्षा की गई। केवल नगरों की ओर ध्यान दिया गया। अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति ने नगरों और ग्रामीणों के बीच विभेद पैदा किया। अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग ग्रामीणों को हेय दृष्टि से देखने लगे। स्वाधीन भारत में भी सरकार द्वारा ग्रामों की उपेक्षा की गई। देश को रुस और अमेरिका की प्रतिकृति बनाने का स्वप्न साकार करने के लिए औद्योगीकरण की होड़ में झोंक दिया। सन् 1948 में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की बैठक हुई थी। उस बैठक में ग्रामों में ही ग्रामीण विद्यापीठ प्रारंभ करने की संस्तुति की गई थी। आदर्श ग्रामों के रुप में इन विद्यालयों को बसाने की कल्पना थी। परन्तु हमारे नेताओं पर पश्चिम का भूत सवार था। परिणाम सामने है, चारों तरफ अत्याचार, अनाचार तथा भ्रष्टाचार की विषबेल फैली हुई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के 68 वर्ष बाद भी 78 प्रतिशत ग्रामीण जनता शिक्षा की दृष्टि से पिछड़ी हुई है। देश की आधी जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन व्यतीत कर रही है। देश का 10 करोड़ वनवासी समाज आज भी उपेक्षित और शोषित है। ग्रामीण विद्यालय की दुरावस्था से हम सभी परिचित हैं। विद्यालय हैं पर शिक्षक नहीं, चिकित्सालय हैं पर चिकित्सक नहीं- ग्रामीण विद्यालय और ग्रामीण चिकित्सालय बिना शिक्षक और चिकित्सक के चल रहे हैं। आज सर्वत्र विद्या का लोप हो चुका है।

हमारी सम्पूर्ण योजना का केन्द्रबिन्दु ग्राम बनें । ग्रामों के विकास में ही भारत का विकास निहित है। चिंतन का दूसरा पक्ष है झुग्गी-झोपड़ियों, गिरि-कन्दराओं एवं वनों के अन्दर निवास करने वाला जनजातीय समाज। यह जनजातीय समाज निश्छल, निष्कपट, सरल तथा स्वाभिमानी है। इनकी सरलता और निश्छलता से हर

किसी को प्रेरणा मिल सकती है। इनका जीवन एक खुली किताब है। राष्ट्रभक्ति इनका आदर्श है, प्रकृति प्रेम इनके जीवन का आधार है। जब-जब देश पर संकट के बादल छाए जनजातीय वीरों ने अपने पराक्रम दिखलाए। केरल के तल्लकल चंदू, राजस्थान के पूंजाभील, नागालैण्ड के जादोनांग, झारखण्ड के बिरसा मुण्डा, सिद्धू-कान्हू, बुधु भगत, असम के शंभुधन फुंगलोसा तथा आंध्र के सीताराम राजू ने किस प्रकार से अपनी वीरता का परिचय दिया है इसकी जानकारी सम्पूर्ण वनवासी समाज को नहीं है।

आजादी के बाद भी इन जनजातीय वीरों की वीर गाथाएँ हमारे बच्चों को नहीं पढ़ाई गई। आज भी इसकी उपेक्षा हो रही है। जनजातीय वीरों ने किस प्रकार से अपने धर्म, संस्कृति, परंपरा तथा राष्ट्ररक्षा के लिए कुर्बानी दी थी, इनका इतिहास बताना आज परमावश्यक है। तभी तो जनजातीय समाज के अंदर अपने पूर्वजों के प्रति आदर और सम्मान का भाव जगेगा। इसी उद्देश्य को लेकर कल्याण आश्रम ने शिक्षा के क्षेत्र में कदम बढ़ाया। एकल विद्यालयों की नींव रखी। छात्रावास तथा औपचरिक विद्यालय प्रारंभ किए। खासकर झारखंड में 106 औपचारिक विद्यालय सरस्वती शिशु/विद्या मंदिर के नाम से चल रहे हैं जिसमें लगभग 20,000 बच्चे अध्ययनरत हैं। 650 आचार्य अहर्निश समर्पित होकर और निष्ठापूर्वक कार्य कर रहे हैं। 60 प्रतिशत बच्चे जनजातीय समाज के हैं। विगत 8-10 वर्षो से विद्यालय का परीक्षाफल 95 से 96 प्रतिशत रहता आ रहा है। 2014 की माध्यमिक परीक्षा में सिलफोड़ी शिशु मंदिर की **बहन कविता कुमारी ने 94.6 प्रतिशत अंक लाकर झारखंड में 9वाँ स्थान प्राप्त कर विद्यालय एवं कल्याण आश्रम का मान बढ़ाया।** इसी प्रकार **सिमडेगा की बहन मीनू कुमारी ने भारत सरकार द्वारा आयोजित विज्ञान प्रतियोगिता में दूसरा स्थान लाकर संगठन को गौरवान्वित किया।** ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले जनजातीय बच्चे, जिनके घरों में प्रकाश की कोई व्यवस्था नहीं रहती। ऐसे बच्चे शाम के समय चूल्हे के पास बैठकर पढ़ाई करते हैं। जब तक चूल्हा जलता है तब तक प्रकाश मिलता है, उसी प्रकाश में बच्चे पढ़ते हैं। इस प्रकार से सम्पूर्ण अभावों के बीच रह कर भी बच्चों ने मैट्रिक बोर्ड की परीक्षा में 80 प्रतिशत से अधिक अंक लाकर अपनी मेधा शक्ति का परिचय दिया है। गत वर्ष 79 मेधावी छात्र-छात्राओं को केन्द्रीय मंत्री सुदर्शन भगत तथा राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री श्री अतुल जोग ने शील्ड एवं प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया। इन छात्रों को आगे बढ़ाना हम सब का धर्म ही नहीं, कर्तव्य भी है। जनजातीय बच्चों का सम्पूर्ण विकास हमारी चुनौती है, संकल्प है। इसी संकल्प के साथ हमारे आचार्य विभिन्न प्रकार की कार्य योजनाएँ बनाते हैं यथा - शिशु शिविर, पहाड़ा प्रतियोगिता, सुलेख प्रतियोगिता, चित्रकला प्रतियोगिता, वाद-विवाद प्रतियोगिता, निबंध प्रतियोगिता, प्रश्न मंच प्रतियोगिता, प्रांतीय खेलकूद प्रतियोगिता एवं फुटबॉल प्रतियोगिता आदि।

एक बार पावरगंज(लोहरदगा) में प्रांतीय स्तर पर पहाड़ा प्रतियोगिता चल रही थी। इस कार्यक्रम में झारखण्ड के शिक्षा राज्य मंत्री उपस्थित थे। एक बच्ची मंच पर खड़ी होकर दर्शकों को कहती है, मुझे 47 तक का पहाड़ा याद है। किसी को पूछना हो तो पूछ सकते हैं। परंतु किसी को पूछने की हिम्मत नहीं हुई। वह बच्ची लोहरदगा जिले की जनजातीय समाज की थी। ऐसी है जनजातीय बच्चों की प्रतिभा। योग्य आचार्यों का सान्निध्य पाकर झारखण्ड के वनवासी बच्चे इंजीनियरिंग, मेडिकल, बैंकिग तथा सिविल सर्विसेज में प्रवेश पा रहे हैं। यह हमारे लिए खुशी का विषय है। खुशी तब और बढ़ जाती है जब वनों एवं गिरि कन्दराओं से आने वाले बच्चे विद्यालय की छुट्टी के समय **'चंदन है इस देश की माटी तपो भूमि हर ग्राम है, हर बाला देवी की प्रतिमा बच्चा-बच्चा राम है'** जैसे भावपूर्ण सुन्दर गीत गाते हैं। ग्रामीण एवं वनवासी बच्चों की प्रतिभा कैसी होती हैं इसे हम इस परीक्षाफल चार्ट के द्वारा समझ सकते हैं-

सरस्वती विद्या मन्दिर, माध्यमिक परीक्षाफल परिणाम 15-16

क्रम	स्थान	जिला	कुल छात्र	1st	2nd	3rd	अनुत्तीर्ण छात्र	उत्तीर्ण प्रतिशत	उच्चतम प्राप्तांक	अभिमत
1	बहरागोड़ा	पूर्वी सि.	101	79	18	02	02	98	87.8%	
2	निश्चिन्तपुर	प.सिं.	30	19	07	03	01	97	83%	
3	सिलफोड़ी	,,	45	35	10	-	-	100	92%	जिला 3 टॉपर
4	मनोहरपुर	,,	53	22	30		01	98	87.6%	
5	लचरागढ़	सिमडेगा	41	05	27	06	03	92	76%	
6	कोतुंगाधाम	,,	27	13	08	03	03	90	85%	
7	सलडेगा	,,	45	21	22		02	96	88%	जिला टॉपर
8	रामरेखाधाम	,,	38	03	23	05	07	82	71%	
9	बसिया	गुमला	68	42	22	-	04	90	86%	जिला में 8वां स्थान
10	पालकोट	,,	42	09	23	08	02	95	79%	
11	लरंगो	,,	72	40	31	01	-	100	80%	
12	छारदा	,,	31	12	10	01	-	76	78.2%	
13	पोकलागेट	,,	07	05	01	01	-	100	75%	
14	टोटो	,,	39	05	26	04	04	88	68%	
15	नवडीहा	,,	50	28	20	01	01	98	78%	
16	सलगी	लोहरदगा	47	47	-	-	-	100	82.6%	
17	गेतलसूद	राँची	83	27	54	-	02	96	89.4%	
18	सुकुरहुटू	,,	60	22	32	-	06	90	83%	
19	सालेहातु	खूँटी	28	-	07	10	11	60	49.6%	
20	डोड़मा	,,	23	08	10	04	01	95	81%	
21	तपकरा	,,	23	07	15	01	-	100	82%	
22	गारु	लातेहार	14	8	6	-		100	72%	
23	महुआडाँड	,,	23	05	12	06		100	71%	
	कुल योग		990	462	414	56	58		95%	

अनौपचारिक शिक्षा द्वारा शिक्षा प्रसार : जनजातीय क्षेत्र की आवश्यकता

- माधुरी यादव, सहायक अनुसंधान अधिकारी

शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाए अभावों से।
अज्ञानता, निर्धनता मिटे, सबको भरे भावों से।।

उद्धृत पंक्तियाँ शिक्षा के उद्देश्य व महत्व को प्रदर्शित करती है। शिक्षा मात्र अक्षर ज्ञान नहीं है वरन परिवार-समाज व राष्ट्र के बीच सामंजस्य बैठाने का श्रेष्ठ उपक्रम है। बालक के जन्मते ही शिक्षण प्रवेश प्रारंभ हो जाता है, जो आजीवन चलता है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है। सर्वांगीण विकास के अन्तर्गत शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक पक्षों को सम्मिलित किया है। औपचारिक व अनौपचारिक ये शिक्षण की दो पद्धतियाँ है। औपचारिक शिक्षा में निर्धारित पाठ्यक्रम के साथ विद्यालय का अपना अनुशासन भी समाहित होता है, जबकि अनौपचारिक शिक्षा खुले परिवेश में सामान्यत: बंधन रहित होती है। जनजातीय क्षेत्रों में औपचारिक शिक्षा के साथ अनौपचारिक शिक्षा ज्यादा कारगर सिद्ध होगी।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अत: वह बाल्यावस्था में होता है तो साहचर्य व अनुकरण द्वारा सीखता है व ग्रहण करता है। जब विद्यालय जाता है तब अपने घर के संस्कारों को साथ लेकर जाता है। आदर्श व श्रेष्ठ आचरण करने वाले परिवार व समुदाय से अभिप्रेरित हो वह उन क्रियाओं को अपने व्यवहार में भी धीरे-धीरे शामिल करता चलता है। इस दृष्टि से जनजातीय समुदाय व क्षेत्र-विशेष के लिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। जनजातीय समाज के लिए अनौपचारिक शिक्षा जीवन स्तर को सुधारने में महती भूमिका अदा कर सकती है। शिक्षा वास्तव में अपने आसपास के वातावरण से साहचर्य उत्पन्न करवाती है। ऐसे में जो बालक प्रकृति के सुन्दर निसर्ग में शुद्ध वातावरण में भ्रमण करता हो उसे बंद कमरे में बैठाकर पेंट-शर्ट व टाई बाँधकर श्यामपट्ट पर पढ़ाया जाना कड़ी मशक्कत करने से कम नहीं है। प्रसिद्ध दार्शनिक व शिक्षाविद् डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् जी ने औपचारिक शिक्षा से उत्पन्न हो रही विकृति के संबंध में कहा था-**''आज की शिक्षा ने विद्यार्थी को बौद्धिक दृष्टि से निर्धन, हृदय से कठोर तथा शारीरिक दृष्टि से बौना बना दिया है।''**

आधुनिक कहे जाने वाले शहरों में फैले अनेक शासकीय व अशासकीय विद्यालयों को निकट से देखने से लगता है, स्कूल का कड़ा अनुशासन अपनी जगह है फिर भी वहाँ बालक (बच्चे) साक्षर तो हो रहे हैं परन्तु उन्हें ज्ञान या बोध भी हो रहा है, यह कहना मुश्किल है।

आदिकाल से अरण्य व जंगलों में निवास करने वाले हमारे जनजातीय बंधुओं को शिक्षित करने के लिए उनकी अपनी भाषा व संस्कृति के उचित समन्वय द्वारा शिक्षण किया जाना ज्यादा तर्कसंगत प्रतीत होता है। शिक्षा का उद्देश्य है कि विद्यार्थी का संपूर्ण निर्माण हो इस संबंध में श्री दीनानाथ बत्रा जी ने, 'विद्यालयीन शिक्षा में शिक्षा परीक्षा मूल्यांकन की त्रिवेणी' पुस्तक में लिखा है- ''हमें इस प्रकार की राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास करना है जिसके द्वारा ऐसी युवा पीढ़ी का निर्माण हो जो राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत हो, शारीरिक दृष्टि से सबल, प्राणिक दृष्टि से संतुलित, मानसिक दृष्टि से सद्विचारों वाले, बौद्धिक दृष्टि से सत्यान्वेशी तथा आत्मिक दृष्टि से सेवाभावी हो। ऐसा सर्वांगीण विकसित युवक जीवन की वर्तमान चुनौतियों का सामना सफलतापूर्वक कर सके और राष्ट्र जीवन को समरस, सुसम्पन्न एवं सुसंस्कृत बनाने के लिए समर्पित हो''।

उक्त विचार हर समाज व राष्ट्र अपने युवावर्ग व विद्यार्थियों के भीतर देखना चाहता है पर वर्तमान शिक्षा प्रणाली इस

महान उद्देश्य को पूर्ण करने में असफल प्रतीत हो रही है। अत: जनजातीय समाज में अनौपचारिक शिक्षा के द्वारा इन उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

जनजातीय समाज में आज भी स्वभाषा व स्वमूल्यों को विशेष मान्यता प्राप्त है। हमारे जनजातीय बंधु भले साक्षर न हों पर जल, जंगल, जमीन, पशु व पर्यावरण के प्रति अनादिकाल से सचेत रहे हैं। इसी अरण्य संस्कृति से पोषित महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, वाल्मीकि, वेदव्यास, द्रोणाचार्य इत्यादि चिंतक, विचारक, वेदवेत्ता, श्रेष्ठ मनीषी व कर्मशील व्यक्तित्व संपूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्राचीनकाल से ही जनजातीय समाज में श्यामपट्ट भले ही शामिल न रहा हो अपितु धरती माँ का आंचल, वृक्षों की कलम औ झरनों की स्याही ही मनुष्य को गढ़ने का सामर्थ्य रखती है। हमारे जनजातीय बंधुओं द्वारा मनाए जाने वाले विभिन्न पर्व-व्रतोत्सव, तीज-त्यौहार, कलाएँ व वाचिक-साहित्य ही अनौपचारिक रूप से इन्हें शिक्षित व सुसंस्कारित करते रहना है व पीढ़ी दर पीढ़ी यह संचारित होती रही है। इस प्रकार जनजातीय क्षेत्रों में जहाँ औपचारिक शिक्षा के द्वारा साक्षर किया जाना आवश्यक है वहीं उनके समुदाय-परिवार द्वारा युवा पीढ़ी को अनौपचारिक शिक्षण प्रदान करना अत्यंत महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। विचारणीय है कि हमारा आदिम समाज पीढ़ी दर पीढ़ी अनेक संकटों को पार करते हुए आज भी इन प्राचीन परम्पराओं-धार्मिक अनुष्ठानों के बल पर अक्षुण्ण बना हुआ है। शिक्षा अन्वेषण व अनुसंधान करने को भी प्रेरित करने वाली होनी चाहिए। वास्तव में जनजातीय क्षेत्र से आए हुए इन विद्यार्थी या युवा वर्ग को शिक्षा प्राप्त कर तर्क दृष्टि से अपनी संस्कृति, सभ्यता, आचार-विचार, परंपराओं के पीछे का वैज्ञानिक सच उजागर करने के लिए संकल्पित होना चाहिए।

मध्यप्रदेश में निवास करने वाली अगरिया जनजाति में लौहासुर देवता की पूजा की जाती है। ये मिट्टी को पहचान कर उसमें प्राप्त लौह अयस्क से बेजोड़ लोहा बनाते हैं। इस समाज के मुखिया ने परम्परा से चली आ रही मान्यताओं को आज भी जीवंत रखा है। जब मिट्टी से लोहे को निकालते हैं तब इन्हें लकड़ी का कोयला जो कि सरई या साल वृक्ष की लकड़ी से बनाता है उसके लिए वे वृक्षों को नहीं काटते। अपितु पूरे जंगल में घूम-घूमकर जहां भी गिरे हुए लाल या सरई वृक्ष हैं उन्हें ढूंढकर सूखी पत्तियों से जलाकर फिर कोयला प्राप्त करते हैं। यहाँ अगारिया समाज वृक्षों को कितना आदर देता है यह स्पष्ट होता है। पर्यावरण की दृष्टि से हम सभी वृक्षों के महत्व से परिचित हैं।

शिक्षा में धर्म को सम्मिलित किया जाएगा तभी वह कल्याणकारी बन पाएगी अन्यथा रट्टू तोते की भाँति समाज के नौनिहाल पाठ्यक्रम रटकर अच्छे अंक अर्जित कर पांएगे यह आवश्यक नहीं। काका कालेलकर एक श्रेष्ठ साहित्यकार होने के साथ विचारक व चिंतक भी रहे हैं उन्होंने अपने निबंध 'शिक्षा की आत्मकथा' में लिखा था-शिक्षा कहती है, ''मैं सत्ता की दासी नहीं हूँ, कानून की किंकरी नहीं हूँ, विज्ञान की सखी नहीं हूँ, अर्थशास्त्र की बांदी नहीं हूँ, मैं तो धर्म का पुनरागमन हूँ। मानवशास्त्र और समाजशास्त्र मेरे दो चरण हैं। कला और कारीगरी मेरे हाथ हैं, विज्ञान मेरा मस्तिष्क है, धर्म मेरा हृदय है। निरीक्षण और तर्क मेरी आँखे हैं, इतिहास मेरे कान हैं। स्वातंत्र्य मेरा श्वांस हैं, उत्साह और उद्योग मेरे फेफड़े हैं। धैर्य मेरा व्रत है, श्रद्धा मेरा चैतन्य है। मैं ऐसी जगदम्बा हूँ, जगद्धात्री हूँ। मेरा उपासक कभी किसी का मोहताज नहीं रहेगा। उसकी सभी कामनाएं मेरी कृपा से तृप्त हो जाएँगी।''अत: औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षा का समुचित समन्वय करके जनजातीय ही नहीं वरन् नगरों एवं शहरों में भी इसके बारे में विचार किया जाना चाहिए ऐसी आवश्यकता है। ❑

संस्कार-सत्कर्मों का प्रवाह

-वर्षा घरोटे, महिला प्रमुख, उत्तराखंड

छात्रावास के कार्यालय में फाइलों में झुकी काम में मशगूल थी। फोन घनघनाया ''राम राम दीदी जी' के अभिवादन से चौंक उठी। बरसों बाद आँखों के सामने 'मिच्योई' की सांवली सी मूर्ति सामने आई। हाँ सच है, अचानक अतीत की स्मृतियाँ ताजा हो गयी। तब हमारा छात्रावास नया था। 'मिच्योई' नागालैण्ड की चौदह नई छात्राओं में से एक छात्रा थी छोटी सी। सांवली -सलोनी गोल मटोल- हिन्दी भाषा आती नहीं थी परन्तु उसकी आँखे एवं मुस्कराहट बहुत कुछ बता देती थीं। पूर्व छात्राओं ने सभी नई बहनों को अपने में समाहित कर लिया था। साथ ही यहाँ रहने के बारे में उन्हें हिदायतें भी दे रखी थी। 'मिच्याई' के बालमन को कुछ दिन तो हिदायतें याद रही और काम में भी आई लेकिन फिर वहीं अपने पुराने ढर्रे पर आ गई।

रोज शाम को खेलने कूदने जाती, बेमन से पढ़ाई करती, कुछ आलस्य के कारण उसकी आदतों में न बदलाव आया, न दुरुस्त हुई। उस दिन खेलकर आई, अंधेरा देखकर डर गयी, और उल्टे पांव आकर मुझसे चिपक गई-''दीदीजी! वहाँ भूत है।'' बेटा भूत-वूत कुछ नहीं होता और ये हनुमानजी हैं न गेट पर वे सबकी रक्षा करते हैं। यह बात उसको बताने पर थोड़ी ही देर में उस बात से आश्वस्त होकर वह अंधेरे को पार करते हुए अपने कमरे में चली गयी। धीरे-धीरे उसने छात्रावास में बताई जाने वाली कहानियों के पात्रों में रुचि लेना शुरू किया। अचानक एक दिन भूकम्प के झटके लगे। सभी छात्राओं को भवन से बाहर आने की सूचना दी गयी, मिच्योई तुरन्त बोली-''अब तो माँ सीता बाहर आयेगी, है न ?'' ऐसे न जाने कितने प्रश्न करते हुए छात्रावास के आंगन में खेलती, कब आगे बढ़ने लगी पता ही नहीं चला।

''दीदीजी'' मुझे हिन्दी टीचर की नौकरी मिल गयी है। मुझे आपने इस लायक बनाया, अब मैं स्कूल में उसी तरह पढ़ाऊँगी.....मिच्योई फोन पर उत्साहित होकर बोलती जा रही थी और मैं अवाक् होकर सुन रही थी- अतीत में खो रही थी। क्या यह वही लड़की है जिसे सब सिरचढ़ी कहते थे, छात्रावास की अनुशासित दिनचर्या में इसके शरारत के गुब्बारे हमेशा हास्य निर्माण करते थे। जब वह 10वीं में पढ़ती थी, एक दिन अचानक उसके घर वाले उसे लेने आए, अब तक मेरे साथिन की तरह हमेशा आगे-पीछे घूमनेवाली 'सिरचढ़ी' आज रो रही थी, छात्रावास में विद्रोह करनेवाली आज छात्रावास छोड़कर जाना नहीं चाहती थी। हमेशा उसे शिकायत रहती थी कि उसके लिए मेरे पास समय नहीं है फिर आज मैं उसकी जिन्दगी का अहम् हिस्सा कैसे बन गई? आज प्रश्न मेरे मन में था। मुझे वह भी दिन याद आया जब सेना में काम करने वाले उसके पति का ऑपरेशन था, तब उसने मुझे फोन पर कहा -''दीदीजी, आप दुआ करोगी तो मेरे पति ठीक हो जायेंगे।''

एक नन्हीं सी बच्ची जो छात्रावास में कुछ वर्ष ही रही पर कितना विश्वास है उसका मुझ पर। आज महसूस हुआ अपनों से दूर रहकर उसने हमें अपना माना था। उसके मन में कठोर अनुशासन का भय नहीं बल्कि संवेदनाओं की शीतल हवा हिलोरे भर रही है। उसके प्रत्येक शब्द में आस्था, विश्वास की गर्माहट को महसूस किया जा सकता था। कभी कहती है ''दीदीजी'' आज आपके डांट का कारण पता चलता है, मैं भी एक बच्ची की माँ हूँ न? बहुत चिंता करती हूँ उसकी, आपकी तरह। यह सुनकर लगता है कि छात्रावास 'संस्कार फैक्ट्री' है, क्या नहीं? पर जब कोई शुभेच्छु अपने बच्चों को लेकर छात्रावास में आते हैं, तो कहते हैं देखो ये छात्राएं कितनी व्यवस्थित रहती है। आपको भी यहीं रखूंगी। यह संवाद सुनकर मन खिन्न हो जाता है। आंतरिक पीड़ा होती है

क्या संस्कार और संस्कार कराने में कितनी गलतफहमी है लोगों में।

बच्चे गीली मिट्टी के ढेले हैं, शिक्षक शिल्पकार हैं। छोटे बच्चों को संस्कार देना आसान है, पर बड़ों को समझाना दुष्कर है। (शायद बड़ों का 'संस्कारों' का कोटा कब का समाप्त हो चुका है) कुछ का कहना है श्रेष्ठ नागरिक ही बच्चों को संस्कार दे सकते हैं। सुविचार रटाना, पंचतंत्र की कहानी, उत्सवों में पारम्परिक पोशाक पहनना क्या यहीं संस्कारों की परिभाषा है? नहीं।

मिच्योई भिन्न भाषा, भिन्न परिवेश से आयी थी। केवल बच्चों के साथ रहकर अपने प्रत्यक्ष अनुभव से जो अहसास हुआ, अपनी क्षमता अनुसार जो उसने ग्रहण किया वहीं उसने जीवन में उतारा था। संस्कार अपने व्यवहार से परिभाषित किए जाते हैं। यह सत्य प्रकल्प में रहते हुए बार-बार सादृश्य होता है। संस्कार हमेशा केवल बच्चों पर ही नहीं बड़ों पर भी होते रहते हैं। निश्चय करके हम किसी को संस्कारित नहीं कर सकते। हम बच्चों को संस्कारित करते हैं, उनके साथ हम भी बदलते हैं। रोज उपदेश देकर, सुविचार रटाकर कोई संस्कारित नहीं होता। अच्छी स्वास्थ्यवर्धक दिनचर्या या प्रकल्पों के आदर्शों के अनुसार गठित दिनचर्या का पालन करना यह एक जीवन का हिस्सा है। आवश्यकता के अनुसार बच्चों को सुविचार बोधकथा आदि के माध्यम से अपने नैतिक मूल्यों को जरूर बताना होगा पर निरपेक्ष भाव से उनको बोधकथाओं का, सुविचारों का तात्पर्य खुद ही ढूँढ़ने दो। उन्होंने जो तात्पर्य ढूढ़ा है, उसे हमें समझने की कोशिश करनी होगी। क्योकि एक ही बात के अनेकानेक तात्पर्य होते हैं। बच्चा किस परिस्थिति में पला है, कहाँ से आया है, उसे समाज का क्या अनुभव आया है, उसके बारे में उसका आंकलन क्या है? हम जो बता रहे हैं और वो जो सुन रही है, उसका संदर्भ वो कहाँ जोड़ेगी यह उन पर ही छोड़ देना चाहिए। हम अपने तात्पर्य, आकलन बच्चों पे थोपेंगे तो वे मानसिक व भावनात्मक रूप से अपंग हो जायेंगे। मिच्योई जैसी एक अल्हड़ शरारती लड़की इतनी समझदार होगी या प्रच्छन्न रूप से उसमें यहाँ के संस्कार प्रवाहित होंगे, ऐसा तो मैंने सपने में भी नहीं सोचा था। पर एक सीधी सरल बात तो ध्यान में आ गयी, सुविचार जबरदस्ती रटाने की अपेक्षा आचरण से अधिक फलित होते हैं। हम क्या बोलते हैं उसकी अपेक्षा हम क्या करते हैं इसका असर 'बालमन' पर ज्यादा होता है। हम अच्छा व्यवहार करेंगे तो वो हमसे ज्यादा अच्छा व्यवहार करेंगे। यह विश्वास हमें भी करना होगा।

आज फिर से उस चुलबुली मुस्कुराहट का अहसास कर रही हूँ। पानी की लहरों की तरह समय तो बहता चला गया किन्तु उस चंचल मन के साथ बीती यादों ने मन में एक ऐसी जगह बना ली जिसे मैं आज तक भूला न पायी, न भूला पाऊंगी।

शायद मैं ही नहीं, सभी कभी न कभी इस बदलाव को अपने जीवन में महसूस करते होंगे- कभी अपने बच्चों में, विद्यार्थी, सहकर्मी या कर्मचारियो में। बस अनुभवों के आधार पर इतना ही कहूंगी कि अगर जीवन में संतुष्टि हो, प्रेम हो तो सकारात्मक परिणाम अवश्य आयेंगे। छात्रावास के आंगन में चहकती चिड़ियाँ और हमारी कन्याएं, आंगन के पुष्पों की महक, बच्चियों का सुस्वर गुंजन प्रकृति को जीवंत बना देती है। बालिकायें हमें संवेदनशील बना देती हैं, आपस में में जोड़ देती हैं। **''तू मैं एक रक्त''** का भाव चरितार्थ होने लगता है। न जाने क्यों मैं जमीन पर रहकर आसमान की ओर ताकती हूँ, छात्रावास से विदा हुई उन दीप ज्योतियों को तारों में खोजती हूँ, न जाने कहाँ-कहाँ अपने संस्कार दीप से दिशाओं को आलोकित कर रही होगी। चन्द पलों के लिए आँखों में नमी महसूस करती हूँ, शायद यह सुखद नमी ही छात्रावास प्रमुखों को मिला हुआ अनुपम उपहार है। ❑

वनसम्पदा के ज्ञान से युक्त हो जनसम्पदा की शिक्षा

- लक्ष्मीनारायण भाला, वरिष्ठ प्रचारक, रा.स्वयंसेवक संघ

शिक्षित होने का अर्थ सामान्यत: साक्षर होना या अक्षर-ज्ञान से युक्त होना, यही माना जाता है। जो अक्षर जानेगा वही शब्द बना पाएगा। शब्द बनेंगे तो वाक्य-रचना होगी। वाक्य रचना से साहित्य-सृजन होगा। यही साहित्य ज्ञान का भंडार बनकर ज्ञान-वितरण का साधन बनेगा। यही साधन शिक्षा-व्यवस्था का माध्यम बनेगा। और इसी माध्यम से होकर निकलने वाला छात्र शिक्षित होने का प्रमाण-पत्र पाएगा। शिक्षा पाने का यही औपचारिक मार्ग है।

शिक्षित होने का एक और मार्ग कुछ इस प्रकार का है। जन्म ग्रहण करने से पूर्व गर्भावस्था में ही मनुष्य सुनने लगता है। जन्म ग्रहण करने के बाद सुनी हुई बातों को वह बोलने लगता है। बोले हुए को समझने लगता है। समझे हुए को देखता-परखता है। परखे हुए का अनुकरण करता है। अनुकरण से कौशल प्राप्त करता है। कौशल युक्त कार्य से वह अनुभव प्राप्त करता है। अनुभव से प्राप्त विद्या को वह अभिव्यक्त करता है और यही अभिव्यक्ति उसे किसी विधा का ज्ञानी होने की मान्यता प्रदान करता है। ज्ञान प्राप्ति का यह अनौपचारिक मार्ग है। एक शिक्षित है तो दूसरा ज्ञानी। **शिक्षा और ज्ञान के इन दोनों मार्गों का मेल ही परिपूर्ण शिक्षा है। अक्षर ज्ञान एवं अनुभवजन्य ज्ञान के समन्वय से ही एकात्म शिक्षा का प्रारूप बनता है।** औपचारिक और अनौपचारिक मार्ग एक-दूजे के पूरक बनेंगे तो शिक्षा व्यवस्था परिपूर्ण होगी। शिक्षित को प्रमाण-पत्रों के द्वारा नापा जा सकता है परंतु ज्ञानी को नापने का कोई मापदण्ड नहीं है, उसे तो केवल जाना ही जा सकता है। नापने और जानने का मेल ही शिक्षा-व्यवस्था को निखारता है।

भारत में नपे हुए शिक्षितों की भीड़ बढ़ रही है। यह प्रमाणपत्र हाथ में लिये अपनी नौकरी की खोज में भटक रही है। दूसरी ओर परंपरागत विधा का कौशल प्राप्त व्यक्ति उपेक्षित होकर अपने आप को असहाय पाता है। काम की खोज में गांव से नगर और नगर से शहर की ओर भाग रहा है। तथाकथित शिक्षित को कौशल युक्त बनाना एवं कौशलयुक्त कारीगर को शिक्षित होने का प्रमाण-पत्र देना, आज की आवश्यकता बन गई है। शिक्षा और कौशल का यह मेल हर किसी को आत्मविश्वास से परिपूर्ण बनाकर स्वावलंबी बनाएगा। जनसंख्या का बोझ जनसंपदा बन कर देश के विकास का साधन बनेगी।

विदर्भ के एक वनवासी क्षेत्र का आज से पचास वर्ष पूर्व का मेरा यह अनुभव अब भले ही उस क्षेत्र के लिये अप्रासंगिक हो चुका हो परंतु विशाल भारत के कई क्षेत्रों में यह आज भी प्रासंगिक ही होगा। मेरे जैसे तत्कालीन शिक्षित युवक के समान आज का शिक्षित युवक भी यदि आज किसी वनांचल में जाकर कुछ दिन गुजारे तो यही अनुभव प्राप्त करेगा।

विद्यार्थी परिषद द्वारा आयोजित ''अनुभव शिविर'' के शिविरार्थी के नाते मुझे मेलाघाट के बाबंदा ग्राम में दस दिन गुजारने का अवसर प्राप्त हुआ था। एक वनवासी युवक से मैंने जानना चाहा कि कोई बीमार हो जाए तो आप लोग क्या करते हैं? यहां तो कोई चिकित्सा-सुविधा उपलब्ध नहीं है। युवक का उत्तर था - ''साधारण सी बीमारी हो तो हमारे ओझा से 'टोटका' करवा लेते है और ज्यादा होने पर पांच-सात किलोमीटर की दूरी पर नगर के अस्पताल में ले जाते है।'' मेरी अगली जिज्ञासा थी- ''आप लोगों को ओझा जी'' का टोटका भरोसेमंद लगता है या अस्पताल की चिकित्सा? युवक को असमंजस की स्थिति में पड़ा देख मैंने उसे सहज भाव से कहा-''कोई बात नहीं। तुम अपने मन की बात बताओ।'' कहने लगा- ''इसका उत्तर मैं अभी नहीं दूंगा। ओझा जी से पूछकर कल बताउंगा।'' मुझे तो उत्तर मिल ही चुका था। उसे ''टोटका'' ही अस्पतालों की चिकित्सा की तुलना में अधिक भरोसेमंद लगता है। ओझाजी की बात पर ही भरोसा अधिक है।

प्रश्न यह है कि वास्तव में ''टोटका'' क्या है? वन-संपदा में प्राप्त जड़ी-बूटी, खनिज पदार्थ आदि का उपयोग ही ''टोटका'' है। उसे किसी मंत्र से अभिषिक्त कर उसके प्रति श्रद्धा निर्माण कर दी जाती है। रोगी के मन-मस्तिष्क पर उसका सकारात्मक परिणाम होता है और वह टोटका परिणामकारी बन जाता है। **''टोटका'' के इस अनौपचारिक ज्ञान को चिकित्सा शास्त्र की औपचारिक शिक्षा का संबल मिल जाए तो ऐसे हर ज्ञान में निखार आ जाएगा।** यही बात अन्य विधाओं पर भी लागू होगी।

सांप और नेवले की लड़ाई में सांप अगर नेवले को डस ले तो नेवला पास की झाँड़ी में जाकर किसी घास पर लोट-पोट होता है। नये जोश के साथ पुन: दौड़कर भागते हुए सांप को दबोच लेता है। सांप के विष को बेअसर करने वाली झाड़ी को यदि नेवला जानता है तो मनुष्य क्या पूरी वनसंपदा के औषधीय गुणों को जान नहीं पाएगा ? हमारे पूर्वज जानते थे। अनुभव से प्राप्त इसी ज्ञान से चिकित्सा करते थे। अक्षर ज्ञान से प्राप्त लेखन विधा से उन्होंने इसी ज्ञान को ''आयुर्वेद शास्त्र'' के रूप में लिपिबद्ध किया। यही शास्त्र शिक्षा का एक अंग बना। चीन ने भी इसी ज्ञान का सहारा लेकर ''चाईनीज हर्बल'' की चिकित्सा विधि विकसित की। भारत का आयुर्वेद और चीन का चाइनीज हर्बल एक ही शास्त्र के दो नाम है ऐसा मान भी लिया जाए तो ''आयुर्वेद'' ही अति प्राचीन है। यही अधिक प्रभावी, अधिक परिणामकारी एवं अधिक व्यापक है। आज भारत की वर्धिष्णु जनसंख्या को जनसंपदा के रूप में देखा जाना चाहिए। भारत में उपेक्षित हो रही वन-संपदा के विविध आयामों के साथ उसे जोड़ा जाना चाहिये। ''वनसंपदा शोध संस्थान'' स्थापित कर बहु आयामी शोध किये जाने चाहिये। वहां लुप्त हो रही ज्ञान परंपरा को पुनर्जीवित करने की योजना प्रारंभ की जानी चाहिये। पर्यावरण सुरक्षा के लिये वनों की सुरक्षा तो अनिवार्य है ही बल्कि नये वनों का निर्माण भी आवश्यक है। ऐसे नवनिर्मित वनों में वन्य प्राणियों के लिये सुरक्षित क्षेत्र भी होने चाहिये। भारत का वनांचल केवल वनौषधि से जुड़े हुए आयुर्वेद शास्त्र को ही नहीं अपितु भारत के अर्थशास्त्र एवं समाज शास्त्र को भी समृद्ध करने की क्षमता से युक्त है। लकड़ी, बाँस, बेंत, खनिज पदार्थ, पत्थर, मिट्टी आदि से जुड़े सैकड़ों कुटीर उद्योगों की आधार भूमि वन ही है। जल संकट को दूर करने से लेकर वायु प्रदूषण से वातावरण को बचाये रखने का काम करने वाले क्षेत्र भी वन ही हैं।

आधुनिक विज्ञान यद्यपि मानवीय बुद्धि की परिधि को बढ़ा रहा है परंतु मानव-मन की परिधि सिकुड़ कर अपने आप तक सिमटने लगी है। इस बात के प्रति विज्ञान उदासीन है। लापरवाह है। कारण स्पष्ट है। विज्ञान भौतिक संसाधनों के सहारे ही आगे बढ़ता है। भौतिक संसाधन ही निर्माण करता है। परिणामत: वह भौतिकता में ही सिमट कर रह जाता है। यही कारण है कि विज्ञान-प्रधान सोच से निर्मित्त शिक्षा व्यवस्था एवं उसमें पढ़ाया जाने वाला समाज-शास्त्र भी भौतिकता प्रधान हो रहा है। वनसंपदा उसे प्रकृति प्रधान बनाने में महती भूमिका निभा सकती है। प्रकृति से कट कर या हट कर भौतिक संसाधनों की होड़ में लगे समाज को नई दिशा वनांचल ही दे पाएगा। मन को आनंद देनेवाली वनसंपदा के इस महत्व को आज के शिक्षित हो रहे युवाओं के गले उतारना अतीव आवश्यक है। इसका एक उपाय यह है कि वनसंपदा से संबंधित विषयों को विद्यालयीन पाठ्यक्रम का अंग बनाया जाय। उसे महाविद्यालयीन विषयों की सूची में समाहित किया जाए एवं विश्व विद्यालयों में शोध के लिये सूचीबद्ध किया जाये। वनसंपदा का समग्र ज्ञान जनसंपदा की शिक्षा का एक अंग बनें यह बात महत्वपूर्ण है। वनवासी कल्याण आश्रम द्वारा वनांचल एवं जनजाति से जुड़े सभी आयामों पर गहन चिंतन, मनन एवं मंथन करने के बाद तैयार किया गया नीति-दृष्टिपत्र इस दिशा में उठाया गया एक सशक्त पदक्षेप है। उसे आगे बढ़ाने की पहल भी वनवासी कल्याण आश्रम करेगा तो यह कदम भारत के विकास में एवं भारतीय चिंतन को विश्व-मान्य बनाने में आगे बढ़ा हुआ एक महत्वपूर्ण कदम कहलाएगा। ❑

युवा समिति द्वारा वनवासी बच्चों में आत्मविश्वास बढ़ाने का प्रयास

- पीयूष अग्रवाल, युवा समिति शिक्षा प्रमुख

पूर्वांचल कल्याण आश्रम दक्षिण बंगाल के वनवासी क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के लिए पिछले 5 दशकों से निरन्तर कार्यरत है। कार्य निरन्तर वृद्धिंगत है लेकिन पिछले कुछ वर्षों से शिक्षा के क्षेत्र में शिथिलता का अनुभव हो रहा था। ऐसा नहीं था कि वनवासी बच्चों की शिक्षा बंद हो गयी थी। जिस प्रकार नवीनता के अभाव में मन उचाट हो जाता है, उसी प्रकार नवीन चेतना, नये विचारों के अभाव में प्रयासों के परिणाम नहीं दिख रहे थे। युवा समिति का गठन कार्य को चेतना एवं नवीनता के आयाम देने के लिए किया गया। अपेक्षा यह थी कि वर्षों से चले आ रहे ढर्रे में बदलाव लाकर शहरी एवं ग्रामीण कार्यकर्ताओं को उत्साहित किया जाए। एक आशा सभी के मन में जाग रही थी और युवा समिति को इस आशा को पूरा करना था।

वनवासी छात्रों से बातचीत करने पर ज्ञात हुआ कि उन्हें शिक्षा की जरूरत और महत्व का बोध ही नहीं है। विद्यार्थी लक्ष्यहीन जैसे विद्यालय एवं छात्रावास के बीच कोल्हू के बैल की तरह चक्कर काट रहे थे। उनमें आत्मविश्वास का अभाव था। शहरी लोगों से बात करने से कतराते थे। युवा समिति ने शिक्षा के महत्व को समझाने और वनवासी छात्रों का आत्मविश्वास बढ़ाने का निश्चय किया। हमारा पहला "Education Camp" आकार ले रहा था।

Education Camp

5-6 युवाओं का दल बनाकर हम कल्याण आश्रम के छात्रावासों में जाते हैं। "Education Camp" में शिक्षा का महत्व वनवासी बच्चों को समझाते हैं। साथ ही साथ उनको अपने स्वयं के लिए लक्ष्य निर्धारित करने के लिए कहते हैं। बच्चों से बातें करना, उनकी अंग्रेजी और गणित की समस्याओं का समाधान करना, साथ में खाना, खेलना आदि हमारी दो दिन की दिनचर्या रहती है। **बार-बार जाने से बच्चें अब शहरी कार्यकर्ताओं से घुलमिल से गए हैं। हमें उनके नाम और उन्हें हमारे नाम अब याद रहते हैं।** साथ ही साथ पढ़ाई में रूचि जग रही है। हमने सभी छात्रावासों में कंप्यूटर भी लगवा दिए ताकि हमारे वनवासी छात्र किसी भी क्षेत्र में पीछे ना रहें। अधिकांश वनवासी बच्चे कक्षा 10 के बाद पढ़ाई छोड़ देते थे। युवा समिति की प्रेरणा से अभी 5 बच्चे उच्च माध्यमिक में विज्ञान और वाणिज्य पढ़ रहे हैं। नवीनता का संचार हमने कर दिया, अब गति और गुणवत्ता की जरूरत है। गति संगठन से मिलेगी, किन्तु गुणवत्ता? एजुकेशन कैंप में हमने अनुभव किया कि छात्रों की सभी विषयों में नींव बहुत कमजोर है। कक्षा 10 का छात्र कक्षा 8 के प्रश्नों का भी उत्तर नहीं दे पाता। सिर्फ रटकर परीक्षा उत्तीर्ण हो जाते हैं। गाँव में अच्छे प्रशिक्षक भी नहीं मिलते और स्कूली अध्यापकों से अपेक्षा रखना अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने के समान था। शहरी युवा अपने व्यस्त जीवन से समय निकालकर छात्रावास आते हैं। हर महीनें उनके लिए समय निकालना दुष्कर है। तब क्यों न बच्चों को ही शहर बुलाकर कोचिंग दी जाए। इस विचार ने हमारे दूसरे कैम्पेन "Education Essentials" का रूप लिया।

Education Essentials

वर्ष में 2-3 बार सभी छात्रावासों के कक्षा 9 एवं 10 के बच्चों को 9-10 दिनों के लिए कोलकाता बुलाकर उन्हें अंग्रेजी,गणित,व्यवहारिकता एवं कंप्यूटर की कोचिंग देते हैं। विषय को समझने पर जोर दिया जाता है। साथ ही साथ छात्रों को अच्छे अंक लाने पर भविष्यगत संभावनाओं के बारे में बताकर महत्वाकांक्षी बनाते हैं। यह सब हमारे कार्यकर्ता अपनी व्यस्त दिनचर्या में से समय निकालकर करते हैं।

तीन वर्ष की इस तपस्या का परिणाम अब दिखाई देने लगा है। माध्यमिक परीक्षा में बच्चे अब अच्छे अंक से उत्तीर्ण हो रहे हैं। उनमें अब आगे पढ़ने की इच्छा जग रही है। आवश्यकता है कि हम इस यज्ञ ज्योति को अखण्ड बनाए रखें। ❑

शिक्षा के द्वारा जनजाति समूहों को देश की मुख्य धारा में लाया जाय

- विराग पाचपोर, नागपुर

भारत में पर्वतीय तथा दुर्गम अंचलों में रहनेवाले जनजाति समूहों के बच्चों के शिक्षा के विषय में सरकार और समाजसेवी संस्थाओं द्वारा जितना मूलगामी विचार होना अपेक्षित था उतना नहीं हो पाया ऐसा दिखाई दे रहा है। वास्तव में यह हाल जनजाति क्षेत्र का ही नहीं अपितु समग्र देश व्याप्त शिक्षा क्षेत्र का है। भारत की शिक्षा व्यवस्था और शिक्षा तंत्र देश, धर्म, संस्कृति, जन, इतिहास, परंपरा, महापुरुष, साहित्य, काव्य, नाटक, लोककथाएं, इन सब के बारे में छात्रों को न तो सजग करती है और ना ही उनके मन में इन सबके प्रति प्यार, आस्था, अपनापन, और सम्मान की भावना जगाती है।

मुझे सौभाग्य से जनजाति समूहों के बीच शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने का अवसर मिला था। 1975 से लेकर 1989 तक भारत के पूर्वोत्तर के अरुणाचल प्रदेश में विवेकानंद केंद्र के माध्यम से हम कुछ युवक नागपुर से गए थे और स्वर्गीय एकनाथजी रानडे के मार्गदर्शन में वहां सरकारी विद्यालयों में पढ़ाने लगे थे। उसी समय आपातकाल लग गया था पर हमारा शिक्षादान का कार्य निर्बाध रूप से चल रहा था। आपातकाल के बाद अरुणाचल प्रदेश में केंद्र की ओर से विद्यालय प्रारंभ करने चाहिए ऐसा एक प्रस्ताव आया था और अरुणाचल प्रदेश की सरकार ने उसे स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार प्रथम चरण में अरुणाचल प्रदेश में सात जगहों पर विवेकानंद केंद्र विद्यालय स्थापित किए जायें ऐसा विचार किया गया। उनमें से तिरप जिले के खरसांग में केंद्र का विद्यालय प्रारंभ करने का दायित्व मुझे दिया गया था। मेरे साथ आंध्र प्रदेश से यु भीमराव और तमिलनाडु से लोगनाथन ऐसे दो और युवा सहयोगी थे। सरकारी विद्यालयों में एनसीईआरटी के द्वारा तैयार किये गए पाठ्यपुस्तक के आधार पर विषय पढ़ाने का कार्यक्रम होता था। केंद्र के विद्यालयों में भी वही पाठ्यक्रम और क्रमिक पुस्तकें होती थीं। अपने देश में जनजाति का भौगोलिक क्षेत्र बड़ा है और दुर्गम भी है फिर भी प्राचीन काल में जनजातियों की शिक्षा पर ध्यान दिया जाता था। देश में अंग्रेजों के शासनकाल के दौरान इन जनजातियों को समाज के अन्य वर्गों से विभक्त करने का एक बड़ा सोचा समझा षड्यंत्र चला और दुर्भाग्य से हमारे नेता और समाजशास्त्री इस षड्यंत्र को नहीं समझ सके। अंग्रेजों के बहकावे में आकर वे भी इन जनजातियों को समाज की मुख्य धारा से कटे हुए मानने लगे। लेकिन शिक्षा के द्वारा इन जनजातीय समूह को कुछ बुद्धिजीवियों द्वारा देश की मुख्य धारा में लाने के प्रयास किये गये।

इसी माध्यम से उनके समाज में सुख, शांति, चैन, अमन, प्रगति और सफलता प्राप्त की जा सकती है। पुनः सारा पाठ्यक्रम इसी के आधार पर बनाया गया। परन्तु अपेक्षित परिवर्तन तो दूर की बात जनजाति समूहों के अन्दर भारत के विरोधी तत्त्व पैठ बनाते चले गए और आज तो देश के अनेक संवेदनशील क्षेत्रों में इन्हीं जनजाति लोगों को आगे कर भारत विरोधी अभियान, हिंसक आन्दोलन इत्यादि चलाये जा रहे हैं।

सरकारी रिपोर्ट के अनुसार जनजाति क्षेत्र में विद्यालय भवनों की कमी नहीं हैं, सुविधाओं की भी कमी नहीं हैं पर अनेक जनजाति युवाओं को यह नहीं भाता है क्योंकि इसमें सबसे अहम् भूमिका निभाने वाला व्यक्ति, जो शिक्षक हैं उसके मन में जनजाति के प्रति अपनत्व का भाव ही नहीं हैं। वे केवल अपना पेट पालने के हिसाब से ये नौकरी कर रहे हैं, उनके अन्दर छात्रों के प्रति अपनत्व का भाव न होने के कारण अपेक्षित परिणाम नहीं मिल रहे हैं। मेरा अपना अनुभव भी इसी प्रकार का है, सरकारी विद्यालयों में जो बाहर के शिक्षक आये थे

वे केवल जीविका चलाने के उद्देश्य से ही आये थे। देश के इस दुर्गम प्रदेश में नौकरी मिलने से अपने भाग्य को कोसा करते थे अत: छात्रों को पढ़ाने में उनका ध्यान कम ही रहता था। ये छात्र पिछड़े हुए, जंगली, गंवार, असभ्य हैं, इनको पढ़ाना बेकार है इस प्रकार की भावना उनके मन में रहती थी। दुर्गम स्थानों के शिक्षक तो विद्यालय में यदा-कदा ही जाते थे। शेष समय मुख्यालय में बिता कर अपना वेतन लेकर आनन्दित रहते थे।

भारतीय समाज के इस प्रकार के मनोभावों के कारण इन जनजाति लोगों के बीच ईसाई मिशनरी प्रवेश हो गया और उन्हें भारत विरोधी और हिन्दू विरोधी बना दिया गया। अधिकतर जनजाति समूहों की बोलियाँ हैं पर लिपि नहीं अत: उनको भाषा का दर्जा नहीं मिल सका। मिशनरियों ने उनकी बोली रोमन लिपि में लिखनी शुरू कर दी। बाइबल की कथाओं को उनकी बोलियों में अनुवादित कर साहित्य के रूप में परोसा गया और फिर यह बताना शुरू किया कि तुम्हारी एक अलग पहचान है, अलग भाषा है, साहित्य है, पर ये जो बहुसंख्यक हिन्दू हैं जो तुम्हारी इस पहचान को खतम करना चाहते हैं। अत: तुमको इनके खिलाफ लड़ना होगा। इसमें हम आपका साथ देंगे। ऐसी अंग्रेजी शिक्षा का परिणाम हमारे सम्मुख है कि नागालैंड, मिजोरम, मेघालय, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश, असम और त्रिपुरा जैसे संवेदनशील क्षेत्रों में इन्हीं ईसाई धर्मान्तरित जनजाति समूहों के द्वारा भारत विरोधी गतिविधियाँ चलायी जा रही हैं। इन्हें इसाई मिशनरी और चर्च द्वारा संचालित संस्थाओं का पूर्ण समर्थन प्राप्त हैं।

विद्या भारती जैसे अखिल भारतीय शिक्षा संगठन के द्वारा जनजाति क्षेत्र में एक नया प्रयोग किया गया। असम में हाफलोंग नामक स्थान पर एक अनोखा जनजाति सरस्वती शिक्षा मंदिर शुरू करने का विचार किया गया। उस समय के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं में स्व. कृष्णचन्द्र गाँधी, स्व. लज्जाराम तोमर, और पंकज सिन्हा जैसे कुछ समर्पित युवा शामिल थे। जनजाति भाषा में और भारत की अन्य भाषाओं में क्या समानता हो सकती है यह खोज कर उसके आधार पर पुस्तकें लिखी गयी। इस कार्य में स्व. महिपतिजी चिकटे और स्व. कृष्णराव सप्रे इन दो महानुभाओं का बहुत बड़ा योगदान रहा है। चिकटेजी स्वयं भाषाविद् थे, ग्वालियर में प्रधान आचार्य थे और सेवानिवृत्त होकर असम में आये थे। उन्होंने स्व. कृष्णचन्द्र गांधी के साथ मिल कर और एक नागा नेता श्री रामकुई जी के सहयोग से पहली की बहु-भाषिक पाठ्यपुस्तक लिखी जिससे जनजाति शिक्षा के क्षेत्र में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। हाफलोंग में परिसर में रहने वाले जेमी नागा जनजाति के बच्चों के बारे में विचार करते हुए यह प्रथम प्रयोग था। इसकी सफलता देखकर दिमासा, कछारी और अन्य जनजाति के लोग भी विद्या भारती के पास आये और अपने बच्चों के लिए भी इस प्रकार की पुस्तक की रचना करने की मांग करने लगे।

अपने अनुभव से मुझे यह प्रतीत होता है कि जनजाति क्षेत्र की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उनके लिए विशेष प्रकार की शिक्षा व्यवस्था निर्माण करना जरुरी है। सर्वसाधारण क्षेत्र की शिक्षा और जनजाति समाज की शिक्षा में कुछ बदलाव जरूरी है। उनकी जो स्वाभाविक विकास की प्रक्रिया है उसको कायम रखते हुए हम उनका भौतिक विकास कर सकें इसको ध्यान में रख कर शिक्षा की व्यवस्था लागू करनी होगी। साथ ही साथ भारत की सर्व समावेशक परंपरा, विविधता में एकता की अनुभूति कराने वाली संस्कृति, समाज को सुचारू रूप से चलाने वाला धर्म इन संकल्पनाओं के बारे में उनको बताने की भी कुछ व्यवस्था शिक्षा में होनी चाहिए। कई बार यह देखा गया है कि वर्तमान शिक्षा से प्रेरित युवा जनजाति छात्र स्वयं अपनी परंपरा, संस्कृति से नाता तोड़ लेता है, ऐसा नहीं होना चाहिए। उसे अपनी परंपरा का, माता-पिता का एवं जनजाति का अभिमान होना चाहिए इस बात पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। ❑

कविता.....

ज्ञान-दीप

- लक्ष्मीनारायण भाला

दीप ज्ञान का धर निज -कर में
भ्रमित जगत को राह दिखा दें,
जीवन का हो एक यही व्रत,
दो यह वर हे मात शारदे।।

वसुधा-हित-निर्मित यह दीपक,
जन्मस्थली भारत की माटी,
इस दीपक का स्नेह सनातन,
बाती है पुरखों की थाती।
इसी दीप की अमल ज्योति बन
भारत-जन जग को उजला दें।।

इसकी किरणों की आभा है
ज्ञान और विज्ञान विकासी,
ऋषि-मुनियों ने निज जीवन दे
दिया इसे जीवन अविनाशी।
हम भी एक किरण बन उनकी
परंपरा अविरत विकसा दें।।

जड़ चेतन में छिपे ईश को
इस दीपक ने ही दर्शाया,
सौर-जगत, ज्योतिष गणना के
भेद खोल, जग को हर्षाया।
आलोकित अक्षय प्रवाह को
वर्तमान-अनुकूल बना दें।।

पद और धन की आस नहीं हो,
प्यास न हो जीवन-विलास की,
ऐसा हो आचरण सहज ही
मानवता ले गति विकास की
पंचमुखी-शिक्षा अपना कर
एक दीप से दीप जला दें।
दो यह वर हे मात शारदे।।

बोधकथा.....

पात्रता विकसित करें

एक धनी सेठ ने एक संत के पास आकर उनसे प्रार्थना की, 'महाराज ! मै आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए साधना करता हूँ। पर मेरा मन एकाग्र ही नहीं हो पाता। आप मुझे मन को एकाग्र करने का कोई मंत्र बताएं।' सेठ की बात सुनकर संत बोले, 'मैं कल तुम्हारे घर आऊंगा और तुम्हें एकाग्रता का मंत्र प्रदान करूंगा।'

सेठ ने इसे अपना सौभाग्य समझा कि इतने बड़े संत उसके घर पधारेंगे। उसने अपनी हवेली की सफाई करवाई और संत के लिए स्वादिष्ट पकवान तैयार करवाए। नियत समय पर संत उसकी हवेली पर पधारे। सेठ ने उनका खूब स्वागत-सत्कार किया। सेठ की पत्नी ने मेवों व शुद्ध घी से स्वादिष्ट हलवा तैयार किया था। चांदी के बर्तन में हलवा सजाकर संत को दिया गया तो संत ने फौरन अपना कमंडल आगे कर दिया और बोले, 'यह हलवा इस कमंडल में डाल दो।'

सेठ ने देखा कि कमंडल में पहले ही कूड़ा-करकट भरा हुआ है। वह दुविधा में पड़ गया। उसने संकोच के साथ कहा, 'महाराज! इस कूड़े में हलवा कैसे डाल सकता हूँ। हलवा तो इस कूड़े-करकट के साथ मिलकर दूषित हो जाएगा।' यह सुनकर संत मुस्कराते हुए बोले, 'वत्स, तुम ठीक ही कहते हो। जिस तरह कमंडल में कूड़ा भरा है। उसी तरह तुम्हारे दिमाग में भी बहुत सी ऐसी चीजें भरी हैं, जो आत्मज्ञान के मार्ग में बाधक हैं। सबसे पहले पात्रता विकसित करो तभी तो आत्मज्ञान के योग्य बन पाओगे। यदि मन-मस्तिष्क में विकार-कुसंस्कार भरे रहेंगे तो एकाग्रता कहाँ से आएगी?'

अनुकरणीय

- तारा माहेश्वरी

श्रीमान् भागचन्दजी जैन पूर्वांचल कल्याण आश्रम के प्रारंभिक कार्यकर्ताओं में से हैं। 1978 में कल्याण आश्रम के कार्य को जब अखिल भारतीय स्वरूप प्रदान किया गया तब से ही वे मन प्राणपूर्वक इस पवित्र कार्य से जुड़े हुए हैं। संगठन के विभिन्न दायित्वों का निर्वाह करते हुए संप्रति वे प्रान्तीय कार्यकारिणी सदस्य हैं। उनके मन में अपने पैतृक गांव डेह में भी शिक्षा के विकास की अभीप्सा रही। उन्होंने अपनी धर्मपत्नी शशिकला जैन से इस सन्दर्भ में चर्चा की और दोनों पति-पत्नी ने डेह में 50 लाख रुपये से अधिक कीमत की हवेली और यहाँ मौजूद 1975 वर्ग फुट जमीन आदर्श विद्या भारती स्कूल को दान में दे दी। स्कूल के लिए जमीन दान करने के पीछे उनकी प्रेरणा रही कि गांव में शिक्षा के विकास के अवसर कम होते हैं और जिसके पास जो सहयोग हो वह करना चाहिए। पैतृक हवेली के कई खरीददार आने के बावजूद उन्होंने बेचने का निर्णय न लेकर अपने आवासीय मकान को शिक्षा के लिए समर्पित कर दिया। विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री ताजूराम गोदरा ने बताया कि उच्च प्राथमिक स्तर तक के विद्यालय के संचालन में स्थान की कमी के कारण समस्या आ रही थी और पलक झपकते ही भामाशाह के प्रतिरूप भागचन्दजी ने समस्या का समाधान कर दिया। ध्यातव्य है कि राष्ट्रीय दिगम्बर जैन परिषद ने भागचन्दजी के इस कार्य को संपूर्ण जैन समाज के लिए गौरवपूर्ण एवं अनुकरणीय बताते हुए अपनी मंगल भावनाएं प्रेषित की। कल्याण आश्रम परिवार ऐसे सेवाभावी भागचन्द जैन दम्पति के दीर्घायु और सदा सुखी रहने की प्रार्थना करता है जिन्होंने अपने त्याग और समर्पणभाव द्वारा समाज को नई दिशा देने का काम किया है।

– सुप्रसिद्ध उद्योगपति एवं वनबंधु परिषद के राष्ट्रीय कार्यकारी अध्यक्ष श्री रमेश जी सरावगी ने विगत 20 नवंबर को अपने द्वितीय पुत्र मयंक के विवाह में एक नई और अनुकरणीय पहल की है। संत शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य परम पूज्य मुनि श्री 108 प्रमाणसागर जी महाराज की पावन प्रेरणा से उन्होंने विवाह में होने वाली रस्मों-रिवाजों और दिखावों के नाम पर होने वाले फिजूल खर्चों को रोककर 51 वनवासी कन्याओं का विवाह कराने का निर्णय लिया। विदित हो कि विगत अप्रैल माह में रमेश जी अपनी धर्मपत्नी के साथ अपने पुत्र के विवाह हेतु मुनि श्री से आशीर्वाद लेने पहुँचे थे। तब मुनि श्री ने विवाह आदि के समारोह में फिजूलखर्चों को रोकने और समाज कल्याण में अपने धन का सदुपयोग करने का परामर्श दिया था। श्री रमेश जी ने उसे शिरोधार्य करते हुए उक्त कार्यक्रम किया । कार्यक्रम रांची के प्रसिद्ध बिरसा मुंडा फुटबाल स्टेडियम मोराहा वादी के विशाल मैदान में हुआ। कार्यक्रम में विधानसभा अध्यक्ष श्री डॉ. दिनेश जी उरांव ने सभी 51 जोड़ों को व्यसन मुक्त, नशा मुक्त, सात्विक जीवन जीने का संकल्प दिलाया गया। श्री रमेश जी सरावगी ने अपनी ओर से सभी 51 जोड़ों की जीविका का प्रबंध भी किया है । झारखण्ड की राज्यपाल श्रीमती द्रौपदी मुर्मू ने अपने हाथों से सभी 51 जोड़ों को उपहार दिया। कार्यक्रम में झारखण्ड के अनेक सासंद, विधायक, मंत्रीगणों के साथ रांची महानगर के अनेक गणमान्य नागरिक उपस्थित थे। विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर वन बंधुओं का स्मरण एवं उनके स्वावलम्बन की व्यवस्था निश्चयत: एक अनुकरणीय पहल है। कल्याण आश्रम परिवार इस शुभ प्रयास की अनुमोदना करता है। ❑

NEED OF QUALITY EDUCATION IN TRIBAL AREA

- S.K. KAUL, Editor, Vanbandhu, Delhi

The role of education in facilitating social and economic progress is well recognised. It opens up oppurtunities leading to both individual and group entitlements. Education, in its broadest sense is devlopment of youth. It is the most crucial input for empowering Scheduled Tribes with skills and knowledge and giving them access to productive employment in the future. Improvements in education are not only expected to enhance efficiency but also improve the overall quality of life. The center and states place the higher priority on education as a central instrument for achieving rapid and inclusive growth covering all segments of the education pyramid.

Educational status of STs and drop-out rates

Between 1961 and 2011, the literacy of STs increased by 6.0 times, while that of total population by 2.3 times. The drop-out rate is a critical indicator reflecting lack of educational devlopment and inability of STs to complete a specific level of education. The drop-out rates at primary levels for STs, are substantially higher than the national average. The growth is very large in Maharashtra, Andhra Pradesh, Orissa and Gujarat.

Right to Education

A big education innovation was making Class X CBSE board examination optional, plus continuous and comprehensive evaluation along with a no-fail policy upto Class VIII. De-stressing students and minimizing drop-out rates were some of the main goals . While welcome success has been seen on both these fronts, in recent years clamour has grown against an unfortunate side-effect. Various states have been complaining of a significant decline in learning outcomes. So they have been asking the center to revoke the no-fail policy and also make the Class X CBSE examination compulsory again.

Make good Teachers

If the system of assessment has declined, this means a widespread failure to implement continuous and comprehensive evaluation as mandated by Right To Education (RTE) Act. But this is not the failure of the students so why should they be punished? The real solution lies in improving assessment and accountability systems, while largely translates into improving teachers' recruitment and training. Quality education in operational terms would mean clearly defined outcome indicators, viz learning levels of students, teacher competence, classroom process of teaching and learning material. There is urgent need to attract good teachers who are willing to work in tribal areas by introducing monetary and non-monetary incentives. It is also necessary that all schools provide accomodation to the teachers on or near the school complex.

New Education Quality Index to rank states

Niti Aayog and the HRD ministry have issued a lettter with 34 indicators to the states to supply necessary information to guage school education quality index (SEQI). The index will be calculated annually in five domins . The change in index from year to year will be used to quantify improvement and ranking of states will be based on the extent of improvement of SEQI. SEQI will measure status of education and incremental efforts in the education sector and will give weightage to outcomes rather than inputs. In the first version of SEQI, District Information System of Education (DISE) data of 2014-15 will be used as the base year. Let us hope that the efforts of Niti Aayog will result in a healthy competition between states, and states with large population of STs will appoint young talented men and women teachers in schools located in tribal areas. If they are not acquainted with the tribal language of the area, where they are posted, the state govts. must ask the State Tribal Reserach Institute to organise short duration courses for non-tribal teachers to learn the tribal language and these teachers must be given an extra allownce instead of appointment of local tribals who are not educationally qualified to teach the young children in the primary schools.

Let us focus on setting standards for teachers, having a system that rewards the good ones, and equipping teachers with modern pedagogical tools to teach crucial thinking rather than rote lessons. Only two things will truly de-stress tribal students, good teachers and better opportunities after they complete their education. ❑

GOLDEN

HOUSE OF PRECISION MACHINERY

Specialists in

- Engineering Workshop Machinery
- Sheet Metal and Fabrication Machinery
- Welding and Cutting Equipment
- Wood Working Machinery

Power Press Machine

Inverter Welding Machine

Bandsaw Machine

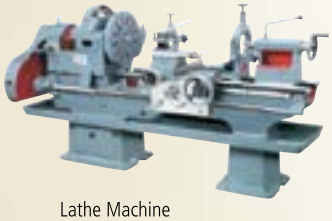

Lathe Machine

CNC Routers

www.goldenmachinery.com

GOLDEN Machinex Corporation

Regd. Office : 194/3, G. T. Road (North), Salkia, Howrah 711 106, West Bengal
Ph : +91 33 26557835, 26557582, Fax : +91 33 26557835, 22115035
Email : mail@goldenmachinery.com, goldenmach@vsnl.net
Showroom : 7, Ganesh Chandra Avenue, Kolkata 700 013, Ph : +91 33 22372835, 22378896

Printed Matter

Book - Post

If Undelivered Please Return To :

Purvanchal Kalyan Ashram

161/1, Mahatma Gandhi Road
Bangur Building, 2nd Floor
Room No. 51, Kolkata-700007
Phone : +91 33 2268 0962, 2273 5792
Email : kalyanashram.kol@gmail.com